सिद्धयोगियों के अनुभव

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को, भारत के गणेशपुरी में स्थित सिद्धयोग आश्रम, गुरुदेव सिद्धपीठ में बाबा मुक्तानन्द ने महासमाधि ली—अपने भौतिक शरीर का त्याग कर वे ब्रह्माण्डीय चेतना में विलीन हो गए।

अक्टूबर १९८२, में बाबा जी की महासमाधि के अपने अनुभव को बताने के लिए, कृपया दिए गए लिंक पर क्लिक करें।

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन के एक स्टाफ़ सदस्य और मैं, न्यूयॉर्क की कैट्स्किल पहाड़ियों से होकर गुज़र रहे थे और श्री मुक्तानन्द आश्रम से बहुत दूर नहीं थे। हम एक छोटी, खुली स्पोर्ट्स् कार में जा रहे थे। दिन बड़ा सुहावना था। चारों तरफ़ पतझड़ के चमकीले लाल, पीले व नारंगी पत्ते बिखरे हुए थे।

आश्रम वापस पहुँचने पर हमने देखा कि क्रिसमस पर लगाई जाने वाली रोशनी की लड़ियाँ जल रही हैं। हमें बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।

आज भी मेरे मन में उस दिन की स्मृति अंकित है—प्रकाश, ओजस्विता और बाबा जी के रंगों से भरी। उस पूरे दिन मुझे ऐसा महसूस होता रहा कि मैं बाबा जी के आलोक में डूबा हुआ हूँ और उसी से घिरा हुआ हूँ।

मैरीलैन्ड, अमरीका

वर्ष १९८२ के पतझड़ के मौसम में, अपनी पढ़ाई पूरी करने मैं एक नए शहर आया था। एक वर्ष पहले, ध्यान में मुझे बाबा जी से शक्तिपात दीक्षा प्राप्त हुई थी।

उत्साह और जोश से भरे उन सह-सिद्धयोगियों से बिछुड़ने के कारण मैं उदास था, जिन्होंने सिद्धयोग अभ्यासों को जानने-समझने में मेरी बड़ी सहायता की थी। मैं बड़ा लालायित था कि नए शहर में भी मुझे एक संघम् मिल जाए।

२ अक्टूबर, १९८२ की शाम को यूनिवर्सिटी के प्रवेशद्वार पर किसी ने मेरे पास आकर पूछा : "क्या तुम्हें योग में रुचि है?" मेरे पैर वहीं ठिठक गए। मुझे लगा जैसे बाबा जी मुझसे कह रहे हों कि मुझे नया संघम् ढूँढ़ने की ज़रूरत नहीं है, बल्कि मैं स्वयं ही ऐसे भक्तों के समूह का केन्द्रबिन्दु बन सकता हूँ। मैं जब घर लौटा तो मेरा मन एक नई प्रेरणा से, एक नए उद्देश्य से ओत-प्रोत था। अगले दिन एक मित्र ने मुझे यह समाचार दिया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।

दो वर्ष बाद मैं अपने शहर में रहने वाले एकमात्र सिद्धयोगी से मिला। इस शहर में बस हम दो ही सिद्धयोगी थे, और फिर हमने मिलकर एक सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र की स्थापना की जहाँ मैं आज भी जाता हूँ। मैंने महसूस किया कि यह केन्द्र बाबा जी के आशीर्वाद का ही साकार रूप है।

वीन, ऑस्ट्रिया

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की शाम को, मैंने अपनी दस वर्ष की बेटी को बताया कि बाबा जी ने अभी-अभी अपनी देह त्याग दी है। मेरी बेटी, जो बाबा जी से सात वर्ष की उम्र में मिली थी, उसने बड़े शान्त स्वर में कहा, "बाबा जी का देहान्त नहीं हुआ है, वे अब हर एक के हृदय में हैं।"

पैरिस, फ़्रांस

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं मैरीलैन्ड में रहती थी। मेरे पास एक फ़ोन आया और मुझे बताया गया कि बाबा जी ने देहत्याग कर दिया है और कई लोग भारत जा रहे हैं। मेरे बच्चे की आयु एक वर्ष की थी और मैं विदेश यात्रा नहीं कर सकती थी। किन्तु उस रात मेरे माता-पिता आए हुए थे, इसलिए मैं वॉशिंग्टन, डी. सी. स्थित सिद्धयोग आश्रम जा पाई। आश्रम में 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' की अविराम धुन आरम्भ हो गई थी और यह निरन्तर कई सप्ताहों तक चलने वाली थी।

काम से घर वापस आते समय भी मैं रोज़ आश्रम जाया करती थी। मैं कई दिन तक रोती रही। एक दिन मैं दीवार पर लगा बाबा जी का चित्र देख रही थी। बाबा जी एक बेंच पर बैठे हुए मुस्करा रहे थे। अचानक ही मैंने बाबा जी को स्पष्ट आवाज़ में कहते हुए सुना, "मैं जीवित हूँ, मैं कहीं गया नहीं हूँ। मैंने अपने भक्तों के हृदय में प्रवेश किया है—मैं तुम्हारे हृदय में हूँ।" मेरे हृदय से एक प्रेममय एहसास उभरा और मेरे पूरे शरीर में फैल गया। मेरे आँसू, हँसी में बदल गए और मैं जान गई कि बाबा जी ने जो कहा, वह सत्य है। आज भी, मैं जानती हूँ कि बाबा जी पूर्णरूप से मेरे हृदय में विराजमान हैं और उन सभी के हृदय में भी, जो उन्हें जानते हैं, उनसे प्यार करते हैं।

वेस्ट वर्जीनिया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में महिलाओं की डॉर्मिटरी में सो रही थी। रात्रि के समय वायुमण्डल में गूँजते 'ॐ नमो भगवते नित्यानन्दाय' की धुन के रहस्यमय-से स्वरों ने मुझे जगा दिया। अचानक दरवाज़े पर दस्तक हुई और हमसे कहा गया कि हम तैयार होकर नित्यानन्द मन्दिर में पहुँचें और संकीर्तन करें, क्योंकि बाबा जी अस्वस्थ थे। सूर्योदय के बाद यह समाचार दिया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।

बाद में, सबको बाबा जी के कक्ष में उनके अन्तिम दर्शन हेतु बुलाया गया। बाबा जी गेरुए वस्त्र ओढ़े, पद्मासन में बैठे थे। वातावरण में व्याप्त ऊर्जा की प्रबल तरंगें इतनी स्पष्टता से महसूस हो रही थीं कि मेरे लिए वहाँ खड़े रहना मुश्किल था।

अपने आश्रम निवास के दौरान, मुझे बाबा जी के लिए सिलाई करने की सेवा दी गई थी। मैंने धैर्य रखना सीखा, साथ ही यह भी सीखा कि रेशमी कपड़े को एक-जैसे और छोटे-छोटे टाँके लगाकर कैसे सिला जाता है। इस सेवा का महत्त्व मुझे तब समझ में आया, जब मैंने बाबा जी की देह पर ओढ़ाए गए गेरुए रेशमी वस्त्र को देखा।

ओशन शोर्स, ऑस्ट्रेलिया

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन अपराह्न में मैं अपने पति को लेने, हवाईअड्डे की ओर जा रही थी जो कि बीस मील दूर था। सुहावनी धूप खिली हुई थी। गाड़ी चलाते समय मुझे हर जगह बाबा जी की उपस्थिति का एहसास हो रहा था। वे मेरे चारों ओर थे, जहाँ भी मेरी नज़र जाती, वहाँ वे पूर्णरूप से विद्यमान थे। मैं बाबा जी के प्रति प्रेम से भर उठी और मुझे अथाह आनन्द की अनुभूति हुई।

घर आने पर मुझे फ़ोन द्वारा यह समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मेरी ख़ुशी व प्रेम बढ़ने लगा और आज भी मुझे बाबा जी की उपस्थिति की अनुभूति होती है।

मैरीलैन्ड, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की शाम, काफ़ी ठण्ड थी। मैं अपने एक मित्र से मिलने उसके घर गया था। मैं रसोईघर के दरवाज़े से अन्दर गया जहाँ तुरन्त ही दो महिलाओं ने मेरा अभिवादन किया। उनकी आँखें पूरी तरह खुली हुई थीं और वे ध्यान से मेरी ओर चिन्ताभरी दृष्टि से देख रही थीं। उनमें से एक ने कहा, "क्या तुमने सुना नहीं कि आज बाबा मुक्तानन्द का देहान्त हो गया है।" वे जानती थीं कि मैं बाबा जी का भक्त हूँ।

इस समाचार से मुझे आश्चर्य तो हुआ किन्तु इससे मैं ज़रा भी उदास नहीं हुआ; बल्कि मुझे तुरन्त ही अनुभूति हुई कि मैं अपने श्रीगुरु से गहराई से जुड़ा हुआ हूँ। मेरे मित्रों को आश्चर्य हुआ कि यह समाचार सुनकर मैं रो नहीं पड़ा; उन्हें दुःख हो रहा था कि उन्हें ऐसा समाचार मुझे देना पड़ा, उन्हें डर था कि मेरा दिल टूट जाएगा। किन्तु दिल टूटने के बजाय मुझे यह अनुभूति हो रही थी कि मेरा हृदय विस्तृत हो रहा है और अब तो मैं बाबा जी के निरन्तर सम्पर्क में रह सकता हूँ। और तबसे ऐसा ही हुआ है।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं न्यूयॉर्क शहर में अपने घर की ओर जा रही थी। घर में प्रवेश करने से ठीक पहले मेरी दृष्टि पूर्णिमा के विशाल चन्द्रमा की ओर गई और उसी क्षण मेरे मन में यह सोचकर कृतज्ञता का भाव उत्पन्न हुआ कि मुझे इस भौतिक शरीर का उपहार मिला है। घर के अन्दर जाने के बाद मैं अपने बिस्तर पर लेट गई और अचानक ही मेरा शरीर सख़्त व अचल हो गया। मेरे बिस्तर के ऊपर की छत नीले आकाश में बदल गई, फिर दृश्य पीछे की ओर सरक गया और इस नीले आकाश के पीछे एक ऐसा स्थान खुला जहाँ एक सुन्दर चेहरा उभरा। उसने मुझसे कहा, “मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।”

फिर मुझे घुमड़ती गर्जन जैसी आवाज़ सुनाई दी और मैंने अपनी रीढ़ में ऊपर-नीचे उठते-गिरते स्पन्दनों को महसूस किया। अपने सहस्रार में मैंने महसूस किया कि मैं ईश्वरीय चेतना हूँ। अपनी रीढ़ में ऊपर-नीचे जाते उन स्पन्दनों के साथ-साथ, मुझे अपने पूर्वजन्मों का अनुभव हुआ, मनुष्य योनी के रूप में भी और अन्य अनेक जीव-योनियों के रूप में भी। इस सबके बीच, पूरे समय मुझे अपने श्रीगुरु बाबा मुक्तानन्द की आनन्दमयी हँसी सुनाई देती रही। मैंने महसूस किया कि वे कह रहे हैं, “तुम्हारे इन सभी जन्मों में मैं तुम्हारे साथ रहा हूँ और हमेशा तुम्हारे साथ रहूँगा।”

जब मैं इस अनुभूति से बाहर आई व फिर से हिल-डुल पा रही थी, तब मैं अपने शयनकक्ष से बाहर आई—और तब ही अपने साथ रहने वाली महिला से यह समाचार सुना : बाबा मुक्तानन्द ने महासमाधि ले ली है।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात मुझे समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं स्तब्ध रह गई और मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि मेरे श्रीगुरु मुझे इस तरह छोड़कर चले गए!

उसी समय की दूसरी बात जो मुझे याद है, वह है नामसंकीर्तन। दिन के दौरान अपने पूरे ख़ाली समय में मैं नामसंकीर्तन करती रहती। हर शाम, मैं व दूसरे सभी सिद्धयोगी किसी एक के घर पर मिलते और संगीत-मण्डली के साथ 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' की धुन के दो या तीन आवर्तन गाते। सप्ताह के अन्त में हम पैरिस स्थित सिद्धयोग आश्रम में, पूरे माह चलने वाले नामसंकीर्तन सप्ताह में भाग लेते।

जब भी मैं संकीर्तन गाती, हर बार वही एक-सा चमत्कार होता : मेरा दुःख व कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण खो देने का भाव लुप्त हो जाता और उसके स्थान पर एक गहन व उत्साहपूर्ण प्रशान्ति छा जाती। माह के अन्त में, मैं मधुर तृप्ति व प्रेम की उसी व्यापक स्थिति में डूबी हुई थी जिसका अनुभव मैं बाबा जी के सान्निध्य में किया करती थी। और यह मैं निश्चित रूप से जान गई कि वे मेरे साथ हमेशा उन अभ्यासों में रहेंगे जो उन्होंने हमें प्रदान किए हैं।

बोवे, फ़्रांस

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं फ़्रांस के पैरिस में सिद्धयोग आश्रम का निवासी व स्टाफ़ का सदस्य था। उस दिन रात्रि के भोजन के बाद, हमें संकीर्तन-हॉल में शाम के संकीर्तन के नियमित कार्यक्रम के लिए बुलाया गया।

संकीर्तन के दौरान, मुझे अचानक ही महसूस होने लगा कि मेरा शरीर भारी से और भी भारी होता जा रहा है। एक समय ऐसा आया कि मेरा शरीर इतना भारी हो गया कि मैं बैठ भी नहीं पा रहा था।

चूँकि संकीर्तन के दौरान मैं हॉल में लेट नहीं सकता था, अतः मैं अपने कमरे में चला गया ताकि बिस्तर पर लेट सकूँ। मेरा शरीर इतना भारी था कि मुझे बड़ा विचित्र लग रहा था। मुझे नहीं पता था कि मुझे क्या हो रहा है; मुझे तो लगा कि मैं अभी बिस्तर पर ही मरने वाला हूँ।

बाद में दूसरे आश्रमवासियों से मैंने सुना कि बाबा जी ने गुरुदेव सिद्धपीठ में महासमाधि ले ली है। तभी मुझे एकदम से समझ में आया कि यह बाबा जी के प्रति मेरी भक्ति और उनके साथ मेरा दृढ़ जुड़ाव था जिससे मैंने यह महसूस किया कि मेरा शरीर भी उसी समय छूट रहा है।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, बाबा जी की महासमाधि के समय, मैं ध्यान कर रही थी। मुझे एक दृष्टान्त हुआ जिसमें बाबा जी मुझे लकड़ी की एक छोटी नाव में मेरे पास दिखे। मैं किनारे पर खड़ी थी और जब वे किनारे पर पहुँचे, उन्होंने जल्दी-से कहा कि मैं नाव में बैठ जाऊँ। कुछ ही देर बाद, बाबा जी ने अपने निर्देश को दोहराते हुए कहा कि मैं अभी, इसी समय नाव में बैठ जाऊँ। फिर हम गहरे पानी की ओर बढ़ने लगे। बाबा जी सामने बैठे थे। जब वे नाव चला रहे थे, सब कुछ शान्त व स्थिर था। कुछ ही समय में, मैंने देखा कि बाबा जी वहाँ नहीं हैं और मुझे चिन्ता होने लगी। फिर एक सन्देश, एक अन्तर-ज्ञान जैसा उभरने लगा—कि मैं वास्तव में गुरु ही हूँ और सिद्धयोग अभ्यासों व सही प्रयत्नों से यह ज्ञान पूरी तरह से उन्मीलित हो सकता है।

ऑरेगन, अमरीका

अक्टूबर १९८२ में मैंने एक स्पष्ट व अनूठा स्वप्न देखा जिसमें बाबा जी एक वेदी के सामने खड़े थे। यह वेदी पत्थर से बने एक बहुत पुराने चर्च जैसी इमारत के अन्दर थी। बाबा जी ने मुझसे सीधे पूछा, "तो तुम्हारा यह सप्ताह कैसा रहा? मैं जानना चाहता हूँ। तुम्हारा सप्ताह कैसा रहा?"

मुझे आश्चर्य हुआ व मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और फिर मेरी नींद खुल गई। उसी दिन हमारे संघम् के एक सिद्धयोगी ने मुझे फ़ोन करके बताया कि बाबा जी ने एक सप्ताह पहले महासमाधि ले ली है।

वॉशिंग्टन, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा का दिन, श्री मुक्तानन्द आश्रम में एक सुहावना दिन था। मैं आश्रम प्रबन्धक के रूप में सेवा अर्पित कर रहा था। दोपहर के भोजन के बाद मैं अपने कमरे में वापस गया। मुझे अत्यधिक उदासी व जड़ता का अनुभव हो रहा था। मेरी पत्नी भी वहाँ थी और वह भी पता नहीं क्यों उदास थी। यह बिलकुल अस्वाभाविक था, इसलिए हमने कुछ ऐसा किया जैसा हम दोपहर में कभी नहीं करते थे—हमने अपने पूजा-कक्ष में जाकर आरती की। दोपहर २ बजे मैं अपने कार्यालय में आया। अन्दर आने पर देखा, टेलेक्स मशीन में से आवाज़ आ रही है। मैंने जो देखा, उस पर मैं विश्वास ही नहीं कर पा रहा था : "बाबा मुक्तानन्द ने महासमाधि ले ली है।"

अगले दो घण्टे तक मैं टेलेक्स मशीन पर गुरुदेव सिद्धपीठ से विस्तार में जानकारी लेता रहा। अन्ततः ४ बजे सूचनाएँ मिलनी समाप्त हुईं। हमने बाबा जी की महासमाधि की घोषणा की और 'ॐ नमो भगवते नित्यानन्दाय' की धुन आरम्भ कर दी। कुछ ही समय बाद शब्द अपने आप ही 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' में बदल गए और यह धुन कई सप्ताह तक चलती रही।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं ओकलैन्ड, कैलिफ़ोर्निया में अपने घर में ध्यान कर रहा था। मुझे एक दृष्टान्त हुआ, मैंने देखा कि मैं एक सुनसान अँधेरी जगह पर अकेला हूँ और डरा हुआ हूँ। अचानक मैंने अपने सिर पर प्रकाश के झिलमिलाते कण देखे और अपने आस-पास बाबा जी की उपस्थिति को महसूस किया।

जब मैंने झिलमिलाते, तेजोमय चमकीले प्रकाश की ओर देखा तो मैं ज़ोर-से चिल्ला उठा, "ये तो बाबा जी हैं! ये बाबा जी हैं!" और इसके साथ ही मैं ध्यान से बाहर आ गया। यह पहली बार था जब मैंने ध्यान में बाबा जी की उपस्थिति को महसूस किया था!

उसी दोपहर, ओकलैन्ड के सिद्धयोग आश्रम को समाचार मिला कि बाबा जी ने गुरुदेव सिद्धपीठ में महासमाधि ले ली है। उस सुबह, ध्यान में हुए अपने अनुभव से मुझे सान्त्वना मिली और मुझे महसूस हुआ कि बाबा जी हमेशा मेरे साथ रहेंगे व मुझे सभी अनिष्टों से बचाएँगे।

बाद में मुझे मालूम हुआ कि उस दिन बाबा जी ने अपने कई भक्तों को ध्यान में दर्शन दिए थे।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को मैं अपने परिवार के साथ गुरुदेव सिद्धपीठ में थी। गुरुचौक से गुज़रते हुए मैंने देखा कि बाबा जी अँधेरे में बैठे हुए हैं और गुरुमाई जी उनके पास में हैं। मुझे महसूस हुआ कि बाबा जी हमें देख रहे हैं। मैं पास जाकर उन्हें प्रणाम करना चाहती थी, फिर विचार आया कि यह उचित नहीं होगा, इसलिए मैंने उन्हें मन ही मन प्रणाम किया।

भोर होने से पहले ही मेरी आँख, 'ॐ नमो भगवते नित्यानन्दाय' की आती हुई ध्वनि से खुल गई जो पूरे आश्रम में गूँज रही थी। मैं यह देखने बाहर गुरुचौक में गई कि क्या हो रहा है, और मुझे बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। उनकी शक्ति हर कहीं महसूस हो रही थी, हर जगह झिलमिला रही थी।

उस दिन बाद में, आश्रम में हर एक को बाबा जी के कक्ष में जाकर उनके दर्शन करने के लिए बुलाया गया। उन्हें पद्मासन में बैठाया गया था व रेशमी वस्त्र ओढ़ाए गए थे। मैंने महसूस किया कि उनकी

शक्ति हम सभी में व्याप्त हो रही है, और बाबा जी के परम चिति में लीन होते ही उनकी शक्ति हममें समा गई।

हममें से हर एक को बाबा जी के कक्ष से एक-एक वस्तु दी गई। मेरे पास अब भी मेरा मनकों से जड़ा कटोरा है जो मेरे पूजा-स्थान में रखा हुआ है। आज जब मैं उस समय को याद करती हूँ, मुझे महसूस होता है कि बाबा जी के आशीर्वाद हमेशा मेरे साथ हैं।

सैन्ट हेलेन्स, ऑस्ट्रेलिया

जब मैंने कई सिद्धयोगियों के अनुभव पढ़ें जिनमें उन्होंने वर्णन किया है कि महासमाधि लेने के समय बाबा जी किस प्रकार विशिष्ट तरीक़ों से उनके पास आए थे तो मुझे अपना अनुभव भी याद आ गया जो मेरे लिए अनपेक्षित था।

मैं उस समय पैरिस में रहती थी और सिद्धयोग पथ पर नई थी। मैं नहीं जानती थी कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। फिर भी २ अक्टूबर, १९८२ के दिन अचानक मुझे महसूस हुआ कि बाबा जी मेरे हृदय में प्रवेश कर रहे हैं और उन्हें अपने श्रीगुरु के रूप में पहचानने का महान उपहार मुझे दे रहे हैं। आज भी मैं अकसर अपना दाहिना हाथ अपने हृदय पर रखती हूँ, क्योंकि मैं जानती हूँ कि बाबा जी सदा के लिए यहाँ, मेरे हृदय में जीवन्त हैं।

कैसा कृपापूरित लेप है यह! मैं बाबा जी के प्रति बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ।

सटन, कॅनडा

मुझे याद है कि मैं अपने घर में ठीक किस जगह खड़ी थी जब २ अक्टूबर, १९८२ को मुझे फ़ोन पर यह समाचार मिला कि बाबा मुक्तानन्द ने महासमाधि ले ली है। मैं स्तब्ध रह गई थी। और फिर मेरे अन्दर कृतज्ञता की बाढ़-सी आ गई।

अक्टूबर १९७६ में, बाबा जी के द्वितीय विश्वयात्रा से भारत लौटने के कुछ ही समय बाद मैं सिद्धयोग पथ का अनुसरण करने लगी थी। जब मैंने अपने घर के पास स्थित सिद्धयोग आश्रम में जाना शुरू किया तब से बाबा जी के प्रत्यक्ष दर्शन करने की इच्छा मेरे मन में बढ़ती चली गई। एक वर्ष बाद मैं अपने पति के साथ गुरुदेव सिद्धपीठ गई। जाने से पहले, मैंने यह शपथ ली कि मैं बाबा जी के भौतिक सान्निध्य को कभी भी साधारण रूप में मिलने वाली वस्तु नहीं समझूँगी, अर्थात् उनके सान्निध्य को अनमोल समझकर हमेशा उसका सम्मान करूँगी।

मैंने अपना वचन निभाया। मैंने बाबा जी के सान्निध्य में होने के हर क्षण का रसास्वादन किया, उसका आनन्द लिया। दर्शन के दौरान बाबा जी के चरणों में बैठने का और दूर से भी उनके भगवे वस्त्रों की झलक पाने का जो भी सुअवसर मुझे मिलता, मैं खुद को उसमें निमग्न हो जाने देती।

अतः जब मैंने बाबा जी के देहत्याग का समाचार सुना, तब मैं यह जानती थी कि मैंने वह सब किया है जो उनका आशीर्वाद पाने के लिए मैं कर सकती थी। बाबा जी के प्रति मैं अनन्त कृतज्ञता का अनुभव कर रही थी। और उस क्षण, मुझे अनुभव हुआ कि बाबा जी हमेशा-हमेशा के लिए मेरे हृदय में प्रवेश कर गए हैं।

मिशीगन, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, हमें फ़ोन पर समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मेरे पति ने किसी कारण से अपना बटुआ खोला और पहली चीज़ जो उन्हें दिखी, वह थी बाबा जी की एक तस्वीर, जिस पर लिखा था, "याद रखो, मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ।" मेरे पति ने अपने जीवन के अन्त तक इस बात पर विश्वास क़ायम रखा।

इलिनॉए, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात मुझे हमेशा एक अत्यन्त विशेष, पवित्र एवं मंगलमयी रात्रि के रूप में याद आती है। मेरे माता-पिता ने बाबा जी का एक चित्र, गलियारे में लगाया था और हर शाम जब मैं सोने के लिए ऊपरी मंज़िल पर अपने कमरे की ओर जाती तब मैं बाबा जी की ओर देखती और मन ही मन उन्हें "शुभ रात्रि" कहती। १९८२ की उस शाम मैंने देखा कि बाबा जी मेरी ओर देखकर सच में मुस्करा रहे हैं, मैंने सचमुच उनके होंठों पर मुस्कराहट देखी। मुझे नींद आ रही थी, इसलिए मैंने अपनी आँखों को मला और फिर से देखा—बाबा जी फिर से मुस्कराए। "अरे वाह!" मैंने सोचा और आश्चर्य के भाव के साथ, हृदय में आनन्द व मधुरता का अनुभव करते हुए मैं सोने चली गई।

अगली सुबह जल्दी ही फ़ोन की घण्टी बजी और समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। उस समय मैं एक युवती थी। उसके बाद, पिछले उनचालीस वर्षों से, श्रीगुरुमाई मेरी गुरु हैं और बाबा जी की सूक्ष्म उपस्थिति मेरे जीवन में सदैव विद्यमान है।

फ़ार्नबरो, यूनाइटेड किंग्डम

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में सेवा अर्पित कर रही थी। इससे पहले, मैं अपना जन्मदिन मनाने गुरुचौक में बाबा जी के दर्शन के लिए गई थी। मुझे बाबा जी के पास बैठने के लिए आमन्त्रित किया गया, और तब मैंने सुना कि बाबा जी मुझसे कह रहे हैं कि मैं उनके चरणों को देखूँ। जब मैंने उनके चमकते रंगीन मोजों को ध्यान से देखा तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मैं उनके आनन्द में विलीन हो रही हूँ। उसी समय बाबा जी एकदम-से उठे और हॉल से बाहर चले गए।

उस रात जब मैं सोने गई तो मैंने स्वप्न देखा कि बाबा जी मोरपंखों से मुझे थपथपा रहे हैं, मेरे अन्दर शक्ति का संचार कर रहे हैं, और मुझे श्रीगुरुगीता का ३२वाँ श्लोक सुना रहे हैं जिसमें कहा गया है, "गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु हैं, गुरु ही भगवान शिव हैं, गुरु ही परब्रह्म हैं। ऐसे श्रीगुरु को नमस्कार है।" यह अद्भुत स्वप्न देखते-देखते मैं एक झटके के साथ जाग गई, क्योंकि कोई आकर मुझे बता रहा था कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मुझे यह बात सच ही नहीं लगी, मुझे तब तक भरोसा नहीं हो रहा था, जब तक मैंने खुद गुरुचौक जाकर बहुत-से भक्तों को प्रेमवश एक-दूसरे से लिपटकर रोते हुए नहीं देख लिया।

मैसेच्यूसेट्स्, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैंने संकीर्तन, ध्यान व बाबा जी का स्मरण करने के लिए एकत्रित हुए सिद्धयोगियों के साथ एक अनौपचारिक कार्यक्रम में भाग लिया। बाद में, जब हम बैठकर बातें कर रहे थे तो चर्चा मुख्य रूप से इस बारे में हो रही थी कि हमें बाबा जी की याद आ रही है, हम सब बाबा जी की बहुत कमी महसूस कर रहे हैं और अब हम उनके सान्निध्य में फिर कभी नहीं रह पाएँगे।

इसके कुछ ही मिनट के बाद, मुझे महसूस हुआ कि बाबा जी अब भी मेरे हृदय में बिलकुल वैसे ही विद्यमान हैं जैसे उस दिन थे जब मुझे शक्तिपात मिला था। मैं फिर से आनन्दित हो गई कि उन्हें खोजने के लिए मुझे फिर कभी कहीं जाना नहीं पड़ेगा—उनके सान्निध्य में होने के लिए मुझे बस अपने अन्दर झाँकना होगा!

यूटाह, अमरीका

अक्टूबर १९८२ के एक सुहावने दिन, मैंने कैम्ब्रिज में सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र पर श्रीगुरुगीता के साप्ताहिक पाठ में भाग लिया। उसके बाद, हम बैठकर बड़ी देर तक बाबा जी व अपनी साधना के बारे में चर्चा करते रहे। हर एक ने कहा कि आज का सत्संग कितने आनन्द से भरा व शक्तिपूरित था।

उसी दिन बाद में मुझे एक मित्र से पता चला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। आघात की इसी स्थिति में, मैंने गुरुदेव सिद्धपीठ जाने का निश्चय किया। मैं कुछ सप्ताह बाद वहाँ पहुँची। दर्शन के समय श्रीगुरुमाई के पास बैठे हुए, मैंने महसूस किया कि बाबा जी ने अपनी असीम करुणा से हमें गुरुमाई जी के संरक्षण में सौंप दिया है। मेरा दुःख कम हुआ, मेरे मन को राहत मिली। तब से, मैंने महसूस किया है कि मैं हर तरह से सुरक्षित हूँ और मेरा ध्यान रखा जा रहा है, और मैं जानती हूँ कि बाबा जी ने मेरा साथ कभी नहीं छोड़ा है।

सैन्डगेट, ऑस्ट्रेलिया

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं श्री मुक्तानन्द आश्रम में सेवा अर्पित कर रही थी। पतझड़ ऋतु का वह एक मनोरम दिन था। दोपहर के भोजन के बाद, मैं अपने कमरे में आराम करने के लिए गई। लगभग १ बजे के बाद, मेरे हृदय में बहुत तेज़ दर्द होने लगा। मैंने तो यहाँ तक सोच लिया, “हार्ट अटैक का दर्द कुछ ऐसा ही होता होगा!”

आराम करने के बाद, मैं सेवा के लिए फिर से आश्रम में आ गई और देखा कि लॉबी में कोई रो रहा है। उसने मुझसे ध्यान-हॉल में जाकर संकीर्तन करने के लिए कहा—क्योंकि बाबा जी ने देहत्याग कर दिया था! बाद में, जब मैंने न्यूयॉर्क तथा भारत के समय के बीच का अन्तर देखा तो पाया कि मेरे हृदय में दर्द होने का समय व भारत में बाबा जी के महासमाधि लेने का समय लगभग एक ही था।

मैं, ‘जान गई’ कि बाबा जी ने मुझे—सीधे मेरे हृदय में—बता दिया था और वे वहाँ से कभी गए ही नहीं हैं।

मैन, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की उस रात को जब बाबा जी ने महासमाधि ली, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में था। बाद में जब श्रीगुरुमाई सबको सम्बोधित कर रही थीं, उन्होंने मेरी ओर बड़े प्रेम से देखा और मुझे महसूस हुआ कि बिजली की तरह शक्ति मेरे सीने में प्रवेश कर गई है। मैं झटके से कुछ पीछे की ओर झुक गया और मेरा हृदय द्रवित हो उठा। इस शक्ति से ओत-प्रोत, जब मैं वहाँ खड़ा था, तब मेरे अन्दर से ये शब्द उभरे : "सब ठीक है, मैं ठीक हूँ। बाबा जी चले गए हैं, पर सब ठीक है। हम सब ठीक हैं।" मैंने स्वयं को पूरी तरह संरक्षित महसूस किया; मैंने महसूस किया कि हम सब उनके संरक्षण में हैं।

दो दिन बाद, जब मैं गुरुचौक गया तो मेरी दृष्टि बाबा जी के आसन की ओर गई। मैं स्तब्ध हो, बीच रास्ते में ही रुक गया, आश्चर्य से मेरा मुँह खुला का खुला रह गया। बाबा जी गुरुचौक से होकर अपने कक्ष की ओर जा रहे थे। भले ही उनकी पीठ मेरी ओर थी, परन्तु उन्हें पहचानने में मुझसे कोई ग़लती नहीं हुई थी। अपने आसन तक पहुँचकर जब वे मुड़े तो मैंने देखा कि वे गुरुमाई जी हैं। मैंने मन ही मन बाबा जी से कहा, "आप कहीं नहीं गए हैं, है न?"

बाबा जी अब भी मेरे साथ हैं, हम सबके साथ हैं और अब भी समय-समय पर मुझे उनके दर्शन होते रहते हैं।

बसल्टन, ऑस्ट्रेलिया

३ अक्टूबर, १९८२ को हम अपने स्थानीय सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र पर नियमित सत्संग में भाग ले रहे थे। उस समय तक हमने बाबा जी की महासमाधि के बारे में नहीं सुना था, किन्तु मैंने देखा कि मुझे आनन्द की वैसी अनुभूति नहीं हो रही है जैसी मुझे सत्संग में आम तौर पर होती है। सत्संग के बाद, एक साथी ने बताया कि आकाशवाणी [रेडिओ] पर शाम को लगभग ५.३० बजे बाबा जी की

महासमाधि का समाचार प्रसारित हुआ था। हम तुरन्त ही गणेशपुरी के लिए रवाना हो गए और सुबह लगभग ७ बजे आश्रम पहुँचे।

गुरुदेव सिद्धपीठ में प्रवेश करने पर मुझे महसूस हुआ कि पूरा आश्रम जैसे ध्यान की अवस्था में हो। पूरा वातावरण दिव्य स्पन्दनों से भरा था और मैं वहाँ के कण-कण में शक्ति की अनुभूति कर रहा था। गणेशपुरी में बड़े बाबा के समाधि-मन्दिर तक बाबा जी की अन्तिम यात्रा तथा समाधि देने की समस्त संस्कार-विधियाँ अविस्मरणीय हैं। आज भी मुझे बाबा जी के समाधि-मन्दिर में उनकी शक्ति का अनुभव होता है। एक मानव के लिए जो सर्वोच्च प्राप्ति है, उस पथ पर मेरा मार्गदर्शन करने के लिए मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

गणेशपुरी, भारत

मुझे साधना करते दो वर्ष हुए थे और मैं श्रीगुरुगीता के साप्ताहिक पाठ के सूत्रधार की सेवा के लिए अपने घर पर तैयारी कर रही थी। उसी समय, एक साधक ने आकर बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।

उस समय, मैं इतना तो जानती थी कि सिद्धयोग मेरा पथ है, किन्तु मेरे जीवन में गुरु के होने का क्या अर्थ है, इस विषय में मेरा ज्ञान व समझ सीमित थी। फिर भी, उस क्षण, कुछ महत्त्वपूर्ण खो देने के भाव की मुझे जो अनुभूति हुई, वह अत्यधिक कष्टदायी थी।

श्रीगुरुगीता का पाठ करते समय, मुझे अपने अन्दर एक ख़ालीपन का एहसास होने लगा। ख़ालीपन का यह एहसास बहुत बड़ा था! ऐसा लग रहा था जैसे मैंने अपनी माता, अपने पिता, अपने भाई, अपने पति, अपने घनिष्ठ मित्र और बहुत कुछ खो दिया हो। फिर वह ख़ालीपन, अत्यधिक विस्तृत, सर्वव्यापी प्रेम से भरने लगा—ऐसा प्रेम जिसका न कोई आदि है और न ही अन्त। मैं निस्सन्देह जान गई कि मैं बाबा जी को कभी खो ही नहीं सकती। भले ही वे चले गए हैं, पर मैं उनकी उपस्थिति को सदैव उस प्रेम के सागर में पा सकती हूँ जिसे मैं अपने अन्दर अनुभव कर रही थी।

वेस्ट मोलसी, यूनाइटेड किंग्डम

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन मैं श्री मुक्तानन्द आश्रम में गुरुसेवा अर्पित कर रहा था। उस शाम जब मैं बाहर अकेला बैठा हुआ था, मैंने देखा कि चन्द्रमा असाधारण रूप से कितना बड़ा व तेजोमय प्रतीत हो रहा है। मैं वहाँ बैठा चन्द्रमा को निहार रहा था तब मुझे ऐसा महसूस होने लगा कि मेरे अन्दर असाधारण, अनूठी और प्रेममय शक्ति की लहरों पर लहरें उठ रही हैं। वे तट से टकराती समुद्र की सौम्य लहरों जैसी थीं और हर लहर मधुरातिमधुर, सर्वाधिक प्रेमभरी शक्ति से सिक्त थी। उनका एहसास विशुद्ध प्रेम जैसा था और मैं बिना किसी सन्देह के जानता था कि ये बाबा जी ही हैं। इस अनुभव ने मुझे बाबा जी के प्रति गहन भक्ति व प्रेम की अवस्था में डुबो दिया और यह प्रेम अधिकाधिक शक्तिपूरित व दृढ़ होता गया।

कुछ देर बाद, मैं आश्रम लौटा—जहाँ मुझे हर कोई अलग ही रूप में नज़र आ रहा था। जिस पहले व्यक्ति से मैंने इस बारे में पूछा, उसने कहा, “तुमने सुना नहीं क्या? बाबा जी ने अभी-अभी महासमाधि ले ली है!” आश्चर्य की बात यह थी कि यह समाचार सुनकर मुझे ज़रा भी आघात नहीं पहुँचा। मैं अब भी प्रेमभरी शक्ति की उन लहरों में डूबा हुआ था। बाबा जी के प्रेम की यह अनुभूति काफ़ी समय तक मेरे साथ बनी रही—मुझे यह आश्वासन दे रही थी कि बाबा जी अब भी मेरे साथ हैं।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं सत्संग के लिए पेरिस [साँतुआँ] के सिद्धयोग आश्रम में थी। जैसे ही मैं घर लौटी, आश्रम के प्रबन्धक का फ़ोन आया। उन्होंने बताया कि बाबा जी ने देहत्याग कर दिया है और आश्रम में संकीर्तन आरम्भ हो गया है। मेरा मन शून्य-सा हो गया और मैं फ़ौरन वापस आश्रम चली गई।

मुझे याद है, नामसंकीर्तन एक महीने तक बन्द नहीं हुआ था, क्योंकि लगभग हर दिन पैरिस के विभिन्न सिद्धयोग ध्यान-केन्द्रों में नामसंकीर्तन हो रहा था। मुझे उदासी महसूस नहीं हो रही थी, क्योंकि मुझे संकीर्तन में बाबा जी की उपस्थिति का अनुभव हो रहा था। उस कठिन समय से गुज़रने में संकीर्तन ने मेरी मदद की।

तब से, मेरा जीवन व साधना चल रही है, किन्तु बाबा जी मेरे हृदय में हमेशा विद्यमान रहे हैं। मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे शक्तिपात प्रदान किया। मैं श्रीगुरुमाई जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि तब से आज तक वे मुझे मार्गदर्शन व संरक्षण प्रदान करती आ रही हैं।

नॉयसिल, फ़्रांस

मैं १९७८ में बाबा जी से ओकलैन्ड में मिली थी और उसके कुछ ही समय बाद मुझे उनकी तीसरी विश्वयात्रा में उनके साथ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसके बाद, अगले कुछ वर्षों तक मैंने बाबा जी को आत्मा के बारे में बड़े सुन्दर तरीक़े से बोलते हुए सुना था, किन्तु मुझे ऐसा लगा कि न तो मुझे आत्मानुभूति हुई है और न ही कभी गहराई से समझ में आया कि बाबा जी किस बारे में बात कर रहे हैं।

फिर, २ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को जब बाबा जी ने महासमाधि ली, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में थी, जहाँ मैं सेवा अर्पित कर रही थी। अगले दिन सुबह श्रीगुरुमाई ने आश्रम में उपस्थित हम सभी लोगों से बात की। मैंने उन्हें कहते हुए सुना कि बाबा जी ने उनसे कहा है कि वे हम सबको बताएँ कि बाबा जी हमें छोड़कर गए नहीं हैं, बल्कि उन्होंने हम सभी के हृदय में हमेशा के लिए प्रवेश किया है। मैंने तत्काल ही अनुभव किया कि मेरा हृदय अत्यन्त सुन्दर, जगमगाती शक्ति तथा मधुर प्रेम से भर गया है। उसी क्षण मैं जान गई कि यह शक्ति, बाबा जी ही हैं *और* मेरी अन्तरात्मा भी।

यह अनुभव सदैव मेरे साथ बना रहा है। धन्यवाद, मेरे प्यारे बाबा जी।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

बाबा जी की महासमाधि के कुछ सप्ताह बाद, मेरा बेटा जो एक ऑटिस्टिक बालक है [एक मानसिक स्थिति जिसमें व्यक्ति अपने आप में खोया रहता है, उसका मानसिक और सामाजिक विकास पूरी तरह नहीं हो पाता] मेरा हाथ पकड़कर, मुझे अपने कमरे में लगी श्रीगुरुमाई की फ़ोटो के पास ले गया। उसने उनकी ओर इशारा कर कहा, "बाबा!" मैंने उसे समझाया, "नहीं, ये बाबा जी नहीं हैं, ये गुरुमाई जी हैं।" ऐसा दो साल तक चलता रहा और मैं उसे धैर्यपूर्वक समझाता रहा कि कौन-सी तस्वीर बाबा जी की है और कौन-सी गुरुमाई जी की।

फिर एक दिन, हमेशा की तरह, उसने गुरुमाई जी की ओर इशारा कर कहा, "बाबा!" अचानक मानो कोई पर्दा उठ गया। मेरी आँखों में आँसू भर आए और मैंने कहा, "हाँ, ये बाबा जी हैं!" उसे सन्तोष हो गया कि आख़िरकार मुझे समझ में आ गया है और उसने फिर कभी मुझसे यह बात नहीं कही।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

जब मुझे फ़ोन पर बाबा जी की महासमाधि का समाचार मिला, मेरा तो जैसे संसार ही बदल गया। मुझे महसूस होता था कि बाबा जी हमेशा मेरे साथ ही हैं। जैसा कि 'गुरुदेव हमारा प्यारा' भजन में कहा गया है, श्रीगुरु ही तो मेरे जीवन के आधार थे। मैं सोच रहा था, "अब मैं क्या करूँगा?" मैं अकेलापन महसूस कर रहा था।

फिर मुझे अपने अन्दर से एक आवाज़ सुनाई दी, "अब तुम बड़े हो गए हो, तुम्हें पता चल जाएगा कि तुम्हें क्या करना है।" मैंने अपने भीतर इस आश्वासन की दृढ़ता व सामर्थ्य को महसूस किया और मैं जान गया कि बाबा जी ने मुझे वह दे दिया है जिसकी मुझे आवश्यकता थी।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

अक्टूबर १९८२ में मैं टेक्सास में रहती थी। बाबा जी के महासमाधि लेने से पहले की रात को मुझे उनकी बहुत याद आ रही थी और मुझे उनके सान्निध्य में होने की तीव्र इच्छा हो रही थी। उन्होंने मुझे जो टोपी दी थी, उसे मैंने सारी रात अपने हृदय से लगाकर रखा। अगले दिन यह समाचार सुनकर मैं बहुत उदास हो गई। मैं संकीर्तन करने के लिए ध्यान-हॉल में गई और दो दिन तक वहीं रही। दो दिन बाद किसीने मुझे एक टॉफ़ी दी। यह बिल्कुल वैसी ही थी जैसी बाबा जी ने मुझे तब दी थी जब मैंने आख़िरी बार उनके दर्शन किए थे। मुझे ऐसा लगा मानो बाबा जी ही मुझे टॉफ़ी दे रहे हैं और कह रहे हैं कि अब फिर से सामान्य जीवन शुरू करने का समय आ गया है।

फ़्लोरिडा, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में सेवा अर्पित कर रहा था। मैंने पहले कभी भी स्वयं से पूछा नहीं था, "मृत्यु क्या है?" फिर भी जब मैं बाबा जी के अन्तिम दर्शन करने उनके कक्ष में गया तो यह प्रश्न मेरे मन में बार-बार उभर रहा था। जब मैंने उनके दर्शन किए, मेरे मन में यह बोध उभरा, "उनकी मृत्यु नहीं हुई है—वे जीवित हैं!"

बाबा जी के कक्ष से बाहर आने पर, मुझे आश्चर्य हुआ कि बाबा जी मेरे हृदय में मुझसे बड़े प्रेम से बात कर रहे हैं। और जब मैं गुरुदेव सिद्धपीठ के बगीचों में घूम रहा था तब तो यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि बाबा जी हर जगह हैं और इसी प्रकार वे अपने समाधि-मन्दिर में व मेरे हृदय में भी सदैव वास करेंगे।

रोडज़्, फ़्रांस

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं सुबह जल्दी उठ गई और तुरन्त ही श्रीगुरुगीता के पाठ के लिए ओकलैन्ड स्थित सिद्धयोग आश्रम जाने के बारे में सोचने लगी। उस समय, मेरे बच्चे एक रिश्तेदार के यहाँ गए हुए थे। यद्यपि आश्रम जाने के लिए मैं एक चुम्बकीय खिंचाव महसूस कर रही थी, फिर भी मैंने तय किया कि मैं इतनी जल्दी नहीं जाऊँगी। बल्कि यह सोचकर कि बच्चे अगले दिन घर आने वाले हैं, मैं घर के दूसरे काम करने लगी।

दिन के दौरान एक मित्र ने फ़ोन पर बताया कि स्वामी मुक्तानन्द ने महासमाधि ले ली है। मैंने स्वयं को भाग्यशाली महसूस किया कि मैं तुरन्त ही आश्रम जा सकती हूँ और बाबा जी के सम्मान में कई दिनों तक चलने वाले संकीर्तन में भाग ले सकती हूँ।

उस दिन से आज तक, बाबा जी हमेशा मेरे साथ हैं, मेरे स्वप्नों में, मेरी पूजा में, उनकी पुस्तकें पढ़ते समय या सिद्धयोग कोर्स में भाग लेते समय। माँ की, और दादी माँ की मेरी भूमिकाएँ निभाने में वे मेरा मार्गदर्शन करते हैं। बाबा जी के मार्गदर्शन के कारण ही मैं शान्तिपूर्वक व दृढ़ता से इस संसार के कृत्यों को कर पाती हूँ और अपने कर्तव्यों का पालन कर पाती हूँ।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

जब-जब मैं पूर्णिमा की रात को आकाश की ओर देखती हूँ तो मुझे वर्ष १९८२ की उस रात का स्मरण हो आता है जब बाबा जी ने महासमाधि ली थी। उस रात, गुरुदेव सिद्धपीठ के अपने कमरे में सोने के लिए जाने से पहले, मैं पूर्णिमा के चन्द्रमा को निहार रही थी। मध्य रात्रि में ही किसी ने कमरे का दरवाज़ा खटखटाया और कहा, "बाबा जी ने महासमाधि ले ली है! दर्शन के लिए उनके कक्ष में आओ।"

मुझे विश्वास है कि बाबा जी अपने महासमाधि लेने का समय व दिन जानते थे, क्योंकि एक रात पहले ही उन्होंने हमें यानी ऑफ़िस के कुछ सेवाकर्ताओं को एक-साथ बुलाकर कहा था कि हम

सबको मिल-जुलकर कार्य करना चाहिए। उनके महासमाधि लेने के बाद, उस समय जो संस्कार-विधियाँ हुई थीं, वे मुझे अब भी याद हैं। भले ही गुरुदेव सिद्धपीठ छोड़े मुझे तीस वर्ष हो गए हैं, मेरा हृदय, मेरे श्रीगुरु के साथ ही है।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, जब मैं अपने परिवार के साथ ओकलैन्ड में रह रही थी, मेरे पास एक मित्र का फ़ोन आया। उसने बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं स्तब्ध हो गई और रोने लगी। मुझे बाबा जी से बहुत कुछ मिला है; और मैं जानती थी कि मैं सँभल जाऊँगी। किन्तु मेरा छोटा बेटा जो गम्भीर रूप से अपंग था, बाबा जी से बहुत प्यार करता था और उनसे अत्यन्त निकटता महसूस करता था। मैंने अपने पति से पूछा, “इसका क्या होगा?”

फिर मुझे पिछली रात देखे स्वप्न की बात याद आ गई, जिसमें मैंने स्वयं को गुरुदेव सिद्धपीठ में देखा था। दृश्य में मैं खिड़की से बाहर, गुरुचौक की ओर देख रही थी। गुरुमाई जी वहाँ से होकर जा रही थीं। उन्होंने मेरी ओर मुड़कर मेरे बेटे के बारे में पूछा, “वह कैसा है?” मुझे आश्चर्य हुआ कि वे बिल्कुल उसी तरह पूछ रही थीं जैसे बाबा जी पूछते थे।

मैंने कुछ इस तरह उत्तर दिया, “ठीक-ठीक है।” गुरुमाई जी ने मेरी ओर देखा और कहा, “चिन्ता मत करो। वह अब मेरे संरक्षण में है।” उनका यह कहना मुझे अजीब-सा लगा क्योंकि उसका ध्यान तो हमेशा बाबा जी ही रखा करते थे। अगले दिन दोपहर में मुझे उस स्वप्न की याद आई तो मुझे समझ में आ गया। इससे मुझे अत्यधिक ढाड़स मिला।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन सुबह-सुबह, मुझे मैनहैटन के सिद्धयोग आश्रम के प्रभारी स्वामी जी ने फ़ोन पर बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। शुरू में मुझे ऐसा लगा कि मैंने बहुत कुछ खो दिया है, किन्तु समय के साथ मेरा मन सतत बाबा जी पर केन्द्रित रहने लगा और इससे मुझे शान्ति व प्रेम की आन्तरिक अनुभूति होने लगी।

जब मैंने सुना कि आश्रम में एक माह तक लगातार संकीर्तन होगा, तब मैंने निश्चय किया कि मैं रोज़ शाम वहाँ जाकर धुन में भाग लूँगा, यद्यपि मेरा घर आश्रम से ४५ मिनट की दूरी पर है। 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' का संकीर्तन गाते समय मैं जान गया कि यह एक अलौकिक नामधुन है!

वह अनुभव हमेशा मेरे मन व हृदय में रहेगा। उस वर्ष के बाद से, हर अक्टूबर माह में मुझे बाबा जी के प्रकाश पर उसी तरह के केन्द्रण का अनुभव होता है जो मुझे शान्ति व प्रेम के महान भावों से भर देता है।

फ़्लोरिडा, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं यूनिवर्सिटी के कुछ छात्रों को लेकर सारी रात चलने वाली एक आध्यात्मिक यात्रा पर जा रही थी। हमारा अन्तिम गन्तव्य, एक स्थानीय मठ था जहाँ पहुँचने का रास्ता जंगलों व खेतों से होकर गुज़रता था। हमने देर शाम को अपनी पैदल यात्रा आरम्भ की और दूसरे दिन सुबह ६ बजे मठ पहुँचे। भोर के समय, जब हम मौन रूप से प्रार्थना करते हुए जा रहे थे, तब आकाश में अनेक उल्काओं को देखकर हमें बहुत खुशी हुई।

उस दिन घर वापस लौटने पर मुझे बाबा जी के महाप्रयाण का समाचार मिला। मेरे घर के सभी सदस्य रो रहे थे, चाहे वे सिद्धयोग विद्यार्थी थे या नहीं। अपने प्रगाढ़ दुःख के बीच मैंने गहन कृतज्ञता का भी अनुभव किया कि बाबा जी के महाविलय के पावन समय के दौरान मैं जाग्रत अवस्था में थी, प्रकृति के बीच थी और प्रार्थना में लीन थी।

मैंने बाबा जी के पुण्य प्रसाद के रूप में उस रात की अनुभूति की और मुझे यह विश्वास है कि जो उल्काएँ हमने देखी थीं, वे बाबा जी के ओजस्वी, पावन जीवन का उत्सव मनाने व उसका सम्मान करने के लिए ही थीं!

न्यूयॉर्क, अमरीका

बाबा जी की महासमाधि के कुछ दिनों बाद मैं उनके समाधि-मन्दिर में गई। बाबा जी को जहाँ समाधि दी गई थी, मिट्टी के उस चबूतरे के जितने निकट बैठ सकती थी, बैठ गई। मैं बहुत उदास थी, पर साथ ही मुझे वहाँ होने की खुशी भी थी।

कुछ क्षण के बाद, अपने ठीक सामने मुझे एक सुनहरा पैर दिखाई दिया! धीरे-से मैंने ऊपर देखा। बाबा जी ठीक मेरे सामने एक कुर्सी पर बैठे हुए थे। एक घुटना दूसरे घुटने पर रखे हुए, वे उसी मुद्रा में बैठे थे जिसमें वे अकसर ही बैठा करते थे।

मैं स्तब्ध रह गई। अपने उसी चिर-परिचित तरीक़े से उनसे बात करते हुए मैंने कहा, "पर बाबा जी आपने तो देह त्याग दी है!" बाबा जी ने मेरी ओर देखा और अपना हाथ उठाकर मेरी ओर संकेत करते हुए मेरा नाम लिया। वे इतनी ज़ोर-से हँस रहे थे कि उनकी पूरी बाँह हिल रही थी। उनके पूरे शरीर से प्रकाश व अतीव आनन्द प्रस्फुटित हो रहा था।

मैंने विरोध किया : "इसमें हँसने की क्या बात है! आपने फिर से मुझे बिलकुल अकेला छोड़ दिया है!"

बाबा जी उसी कोमलता व करुणा से हँसते रहे। और मैं समझ गई कि वे सचमुच मेरे साथ हैं और अपने सभी शिष्यों के साथ हैं।

कॅलॅक दी ब्रिटनि, फ़्रांस

वर्ष १९८२ में, मैं श्री मुक्तानन्द आश्रम में रह रही थी। २ अक्टूबर की दोपहर को हमें उस हॉल में बुलाया गया जहाँ भगवान नित्यानन्द की मूर्ति स्थापित है। हमें बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। हम सभी स्तब्ध रह गए। राग झिंझोटी में 'ॐ नमो भगवते नित्यानन्दाय' की धुन आरम्भ हो गई और दो सप्ताह तक अनवरत चलती रही। एक समय आया जब धुन के शब्द 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' में बदल गए। पहली बार हमने केवल बाबा जी के नाम का संकीर्तन किया।

संकीर्तन पूरे आश्रम में गूँज रहा था। शक्ति असीम थी। बाबा जी के निवास-स्थान को खोल दिया गया और आश्रमवासी दिन-रात वहाँ ध्यान करने लगे थे। मैं एक कमरे में बैठ गई; मैं एक ही समय अत्यन्त तीव्र दुःख के साथ-साथ आनन्द के भाव से भरी हुई थी।

जब मैं बाबा जी के महाप्रयाण की वास्तविकता को स्वीकार करने की कोशिश कर रही थी, तब श्रीगुरुमाई द्वारा दिए गए सान्त्वना के शब्द, गुरुदेव सिद्धपीठ से लगातार प्रसारित किए जा रहे थे। उनके शब्दों में निहित शक्ति व करुणा ने मुझे आश्वस्त किया कि बाबा जी ने हमें ऐसी महान विभूति के संरक्षण में सौंप दिया है जिन पर मैं विश्वास कर सकती हूँ और इस धरा पर मेरी शेष जीवन-यात्रा में वे मेरा मार्गदर्शन करेंगी।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को जब बाबा जी ने महासमाधि ली थी, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में था। उस रात, जिस कमरे में मैं ठहरा हुआ था, वहाँ किसी ने आकर कहा कि हर एक को मन्दिर में जाकर संकीर्तन में भाग लेना है, क्योंकि बाबा जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं है।

जब हममें से कुछ लोग मन्दिर में पहुँचे तो वह पूरा भर चुका था। इसलिए हम संकीर्तन के लिए, बाबा जी के कमरे के सामने गुरुचौक में गए। इसके तुरन्त बाद ही बाबा जी के कमरे से एक व्यक्ति बाहर आया। मैंने पूछा कि क्या हुआ। उसने उत्तर दिया, "बाबा जी ने महासमाधि ले ली है!" मुझे आघात लगा। मैं वहीं बैठ गया और रोने लगा।

फिर अचानक ही, बाबा जी के कमरे से एक महिला बाहर आईं और उन्होंने हाथ से हमें अन्दर आने का संकेत किया। मैं बाबा जी की देह के सामने बैठ गया; उनकी आँखें हल्की-सी खुली हुई थीं और मुझे महसूस हुआ कि वे जीवित हैं। मुझे अपने अन्तर में एक आवाज़ सुनाई देने लगी जो बार-बार कह रही थी, "गुरु शरीर नहीं हैं। गुरु शरीर नहीं हैं।"

बाबा जी के इन अन्तिम दर्शनों से और उनसे मिली इस सिखावनी से मुझे महसूस हुआ कि मैं बहुत भाग्यशाली हूँ।

फ़्लोरिडा, अमरीका

बाबा जी के महासमाधि लेने से एक सप्ताह पहले, मैंने स्वप्न देखा कि मैं एक हॉल में हूँ और एक शानदार-सा पियानो मेरे पास रखा है। बाबा जी आकर एक बेंच पर बैठ जाते हैं। मुझे पियानो बजने की आवाज़ सुनाई देने लगती है और शब्दों के बिना ही, वह संगीत मेरे हृदय से बात करने लगता है। सुरों के माध्यम से बाबा जी मुझसे कहते हैं कि वे जा रहे हैं। मैं रोते हुए उनसे कहती हूँ कि मैं आपके बिना नहीं रह सकती। संगीत बजता रहता है और एक बार फिर बाबा जी संगीत के माध्यम से मुझसे कहते हैं कि मैं उन्हें हमेशा संगीत में पाऊँगी।

एक सप्ताह के बाद, मैं बार्सीलोना के सिद्धयोग आश्रम के ध्यान-हॉल में ज्ञानेश्वर महाराज से सम्बन्धित एक नाटक का पूर्वाभ्यास कर रही थी—तभी एक स्वामी जी आए और हमें बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। जब मैंने यह सुना तो मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मैं एक विशाल, अनन्त आकाश में तैर रही हूँ जो समय से परे है—जो सबसे एकदम विलग है।

एक ही चीज़ थी जो मुझे सार्थक लग रही थी, वह थी मन्त्रधुन का सहारा लेना। हार्मोनियम के पास जाकर मैंने 'ॐ नमः शिवाय' बजाना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे हॉल में उपस्थित सभी लोग मेरे साथ गाने लगे। बाद में हमें ज्ञात हुआ कि विश्वभर के सिद्धयोग आश्रम तथा ध्यान-केन्द्र निरन्तर 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' का संकीर्तन कर रहे हैं।

मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ थी कि उन्होंने स्वप्न में आकर मुझे बताया कि मैं संकीर्तन के माध्यम से हमेशा उनके साथ रह सकती हूँ।

न्यूयॉर्क, अमरीका

वर्ष १९८२ में, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ की गौशाला में सेवा अर्पित कर रहा था। बाबा जी रोज़ सुबह और शाम को गायों को चारा खिलाने व उन्हें सहलाने वहाँ आते थे। महासमाधि लेने से पूर्व, उस शाम को बाबा जी जल्दी आ गए थे; उन्होंने कुछ गायों को चारा खिलाया और शेष के बारे में पूछा।

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की उस रात, एक मित्र ने आकर बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं स्तब्ध रह गया, किन्तु तुरन्त उठकर गौशाला में गया। एक अन्य व्यक्ति गायों का दूध दुह रहा था और मैं मौन होकर सफ़ाई कर रहा था। हमारा कार्य समाप्त हो जाने पर मैं अन्नपूर्णा में दूध पहुँचाने के लिए रात्रि में ही बाहर आया। मैंने उज्ज्वल पूर्णचन्द्र की ओर देखा तो मुझे रोना आ गया। अन्नपूर्णा के निकट पहुँचकर मेरा रोना बन्द हो गया और मैं दूध के बर्तन ख़ाली करने के लिए अन्दर गया। मैं पुनः गौशाला की ओर चला और मुझे फिर रोना आया। गौशाला पहुँचने पर मेरा रोना रुक गया; और मुझे महसूस हुआ कि मेरा रोना समाप्त हो गया तथा मुझे अब और रोने की आवश्यकता नहीं है।

मुझे प्रफुल्लता, चेतनता व आनन्द का अनुभव हुआ। मैंने महसूस किया कि बाबा जी ने मुझे अपनी प्रेममयी उपस्थिति से आवृत कर लिया है।

पर्थ, ऑस्ट्रेलिया

कितना अविस्मरणीय दिन था वह। मुझे फ़ोन द्वारा सन्देश मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है और हम संकीर्तन करने के लिए स्थानीय सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र पर एकत्र हो रहे हैं। यह समाचार सुनकर मेरा मन निस्तब्ध हो गया; ध्यान-केन्द्र जाने के लिए तैयार होते समय और वहाँ पहुँचने तक मेरा मन वैसा ही निस्तब्ध बना रहा। केन्द्र का पूरा वातावरण भी निस्तब्ध था, शक्ति इतनी प्रखर थी कि स्पष्ट महसूस हो रही थी। केन्द्र में एकत्रित लोग प्रेम से मौन में एक-दूसरे से मिल रहे थे; यह स्पष्ट था कि सभी एक-दूसरे की भावना को समझ रहे हैं।

'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' गाते-गाते मैं उसके वर्णों में खो गई और मुझे महसूस हुआ कि मेरे अन्दर बाबा जी की उपस्थिति व उनका प्रेम बढ़ता जा रहा है।

मेरे मन के किसी छोटे-से कोने में एक विचार आ रहा था, "विषाद की इस स्थिति में मुझे रोना क्यों नहीं आ रहा है; दुःख कहाँ है?"

यह असम्भव लग रहा था, किन्तु दुःख के बजाय, मैं स्वयं को अविश्वसनीय रूप से बाबा जी के प्रेम से परिपूर्ण महसूस कर रही थी और अनुभव कर रही थी कि बाबा जी ने जो कहा था वह सच है—उन्होंने देह त्याग दी है किन्तु वे अपने शिष्यों के हृदय में पूरी तरह से प्रविष्ट हो गए हैं।

एरिज़ोना, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, जब बाबा जी ने महासमाधि ली थी तब मैं वहीं था। मैं जून माह से गुरुदेव सिद्धपीठ में रह रहा था। शुरू में मुझे गहरा सदमा लगा और मैं उदास हो गया। मेरे बाबा जी चले गए थे; और अब भौतिक रूप से उनके साथ न रह पाने का विचार बड़ा कष्टप्रद था। उनका दिव्य स्वरूप मेरे लिए कितना अनमोल था!

फिर भी, जैसे-जैसे उनके नाम का संकीर्तन पूरे आश्रम परिसर में निरन्तर व्याप्त हो रहा था, वैसे-वैसे उनकी शक्ति भी स्पष्ट तौर पर महसूस हो रही थी। वातावरण प्रसन्नता से भरने लगा। ऐसा लगा कि हमें अपने दुःख से परे ले जाया जा रहा है—उनके प्रेम ने हमें थामे रखा था और हम यह महसूस कर रहे थे कि वे बिलकुल हमारे साथ ही हैं। दूर-दूर से व आस-पास के स्थानों से भक्तगण आने

लगे थे। मैं देख पा रहा था कि उनके चेहरे के दुःख व उदासी के भाव, शान्ति व सन्तोष में बदल रहे हैं, क्योंकि वे भी उसी प्रेम में डूब रहे थे।

मेरे लिए चरम क्षण तब था जब मुझसे कहा गया कि एक दिन भोर के समय मुझे वहाँ खड़े रहकर बाबा जी की देह का ध्यान रखना है। वहाँ बाबा जी और मैं, हम दोनों ही थे। एक समय तो ऐसा लगा कि बाबा जी वहीं हैं, अपनी भौतिक देह के थोड़े ऊपर के स्तर पर विचरण कर रहे हैं और अनकहे शब्दों में मुझसे कह रहे हैं, "देखो, मैं यहीं हूँ। मैं कभी गया ही नहीं।"

वॉशिंग्टन, अमरीका

१ अक्टूबर, १९८२ को श्रीगुरुगीता पाठ के बाद, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में, ऊपर छत पर गई। सवेरा हो ही रहा था, आश्रम के चारों ओर की तानसा घाटी में अत्यन्त अद्भुत मनमोहक बैंगनी रंग की धुँध छाई हुई थी। ऐसा मैंने पहले कभी नहीं देखा था। मैं नहीं जानती थी कि यह सर्वाधिक सुन्दर सवेरा, इस धरा पर बाबा जी के जीवन का अन्तिम दिन है।

२ अक्टूबर की सुबह-सुबह किसी ने मेरा दरवाज़ा खटखटाया और कहा कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं ध्यान-हॉल में गई, जहाँ उन्हें समाधि देने की तैयारी चल रही थी। बाद में हम सभी को बाबा जी के कमरे में आने के लिए कहा गया। मैं बहुत देर तक वहाँ बैठी रही, मुझे अपने अन्दर पूरी तरह से शान्ति महसूस हो रही थी। पहले जो ध्यान-कक्ष हुआ करता था, वहीं कुछ दिनों बाद बाबा जी को समाधि दी गई; वही ध्यान-कक्ष वर्तमान में बाबा जी का समाधि-मन्दिर है। उन दिनों का वर्णन मैं इस तरह करूँगी—उदासी से उल्लास तक। मुझे ऐसा लगा ही नहीं कि बाबा जी चले गए हैं; मुझे अपने भीतर उनकी उपस्थिति और अधिक प्रबलता से महसूस हो रही थी, और आज भी होती है।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ का वह दिन मैं कभी नहीं भूलूँगा। मेरे भाई ने श्री मुक्तानन्द आश्रम से मुझे फ़ोन किया और यह समाचार बताया। मेरा परिवार साथ ही था। जो सुना, उससे स्तब्ध होकर हम वहीं बैठे रहे। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें या इस समाचार पर भला कैसे विश्वास करें।

उसी क्षण, किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। मैंने दरवाज़ा खोला, एक भारतीय व्यक्ति वहाँ खड़ा था। वह घर-घर जाकर वेदों की पुस्तकें बेच रहा था। मेरी आँखें आँसुओं से भरी थी, मैंने उससे कहा कि हमारे परमप्रिय श्रीगुरु ने अभी-अभी महासमाधि ले ली है। उसने बड़ी करुणा से मेरी ओर देखा और पूछा कि क्या वह अन्दर आ सकता है।

वह हमारे हार्मोनियम के पास बैठ गया और हमें सान्त्वना देने के लिए हार्मोनियम बजाते हुए भजन गाने लगा। उसने एक भजन का अर्थ भी हमें समझाया कि जब कोई महापुरुष अपनी देह का त्याग करते हैं तो वे वास्तव में कहीं जाते नहीं हैं, बल्कि अपने भक्तों के हृदय में प्रविष्ट हो जाते हैं। उसके शब्द बहुत सान्त्वना देने वाले व प्रेम से भरे थे!

मैंने उससे पहले या आज तक भी किसी से घर-घर जाकर वेदों की पुस्तकें बेचने वाले व्यक्ति के बारे में नहीं सुना है। यह वास्तव में बाबा जी की ओर से दिया गया उपहार था ताकि हमारे शोक के समय में हमें सम्बल मिले और जिस समय हम उनकी इतनी कमी महसूस कर रहे थे, उस समय हमें दिलासा व सहारा मिले।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

महासमाधि लेने से कुछ महिनों पहले बाबा जी हमेशा आश्रम में अलग-अलग स्थानों पर जाकर लोगों से बातचीत करते दिखाई देते थे। वे प्रबन्धकों से बात करते, दर्शन देते या बच्चों के साथ अपनी गोल्फ़ कार्ट में सवारी करते थे।

शाम के समय, बाबा ध्यान-गुफा में जाते, उन लोगों को आशीर्वाद देते जो वहाँ उनकी शक्ति के साथ ध्यान कर रहे होते।

अपने उन अन्तिम महिनों में बाबा जी स्वयं को पूर्णरूप से समर्पित कर रहे हैं यह देखना अत्यन्त अद्‌भुत था। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि जैसे बाबा जी अपना समय बिलकुल नष्ट नहीं करना चाहते थे, वे अपने हर पल का पूरी तरह से सदुपयोग कर रहे थे, जैसे कि उनके पास जितना समय शेष था उसका उपयोग वे दूसरों के प्रति खुद को अधिक से अधिक देने के लिए कर रहे थे।

टेक्सास, अमरीका

वर्ष १९८१ के पतझड़ के मौसम के दौरान, मैक्सिको शहर स्थित आश्रम में, मैंने स्वप्न देखा कि बाबा जी का देहान्त हो गया है। आँसुओं से भरी आँखों के साथ और मैंने सब कुछ खो दिया है इस अत्यन्त कष्टदायी दुःख के साथ मैं जाग गई। ऐसा दुःख मैंने पहले कभी महसूस नहीं किया था। उसी दिन मैंने बाबा जी के साथ रहने के लिए भारत जाने का निश्चय कर लिया। मैं मार्च १९८२ में भारत आ गई।

२ अक्टूबर की पूर्णिमा की शाम को, मैं सायंकालीन नामसंकीर्तन में गई; एक वीडिओ दिखाया जा रहा था जिसमें बाबा जी, उस दिन को याद कर रहे थे जब भगवान नित्यानन्द ने देहत्याग किया था। बाबा जी अपने कक्ष के बाहर अँधेरे में बैठे थे। अपने कमरे में लौटते समय मैं रुकी और बड़ी देर तक चन्द्रमा को देखती रही। मैंने अपने अन्दर अतीव परिपूर्णता और सन्तुष्टि महसूस की।

उसी रात, मुझे पता चला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं रोने लगी और घण्टों रोती रही, रोती ही रही। जैसे-जैसे यह समाचार फैलता गया, सैकड़ों लोग बाबा जी के अन्तिम दर्शन करने आने लगे। आश्रम में माह भर नामसंकीर्तन आयोजित किया गया था, और इसी ने मुझे उबारा। मैंने महसूस किया कि जिस अद्‌भुत शक्ति को बाबा जी ने मेरे अन्दर जगाया था, वह अब भी मेरे साथ है और मुझे मार्गदर्शित कर रही है। और अब, श्रीगुरुमाई के सान्निध्य में मेरा ज्ञान व मेरी परिपक्वता निरन्तर विकसित हो रही है।

न्यूयॉर्क, अमरीका

बाबा जी के महासमाधि लेने से पहले, दोपहर को उद्‌घोषणा की गई कि बाबा जी के दर्शन होंगे; मुझे बहुत आश्चर्य हुआ क्योंकि यह उद्‌घोषणा गुरुचौक में सितार के एक ही तार को बजाकर बहुत ज़ोर-से और असाधारण स्वर में की गई थी। मेरे लिए यह दर्शन के लिए अनिवार्य रूप से उपस्थित होने की आज्ञा जैसा था। जब मैं बाबा जी के सामने जाकर खड़ा हुआ—जो कि उनके सामने जाने का अन्तिम अवसर था—तो वे मेरी ओर देखकर इतने स्नेह से, इतने प्रेम से, इतने अपनेपन से और इतनी मित्रता से मुस्कराए, कि मैंने इससे पहले कभी ऐसा महसूस नहीं किया था; उन्होंने अत्यन्त मधुर गहरे स्वर में मेरा स्वागत किया, उनका ऐसा स्वर मैंने पहले कभी नहीं सुना था। उनसे जो प्रेम मेरे अन्दर बह रहा था, वह इतना प्रबल था कि मैं खड़ा नहीं रह पा रहा था और वहीं उनकी कुर्सी के पास बैठ गया। उस क्षण में मैं उनके ज्ञान व प्रेम में पिघल चुका था, मैं वहीं बैठा रहा; शायद पल भर के लिए ही बैठ पाया था, और फिर हॉल मॉनीटर ने मुझे आगे चलने के लिए कहा।

इतने वर्षों बाद, मेरा वह अनुभव आज भी मेरे साथ बना हुआ है। जब भी मुझे बाबा जी से दूर होने या सीमित होने का एहसास होता है, मैं उस क्षण को याद करता हूँ। और जिस तरह से मैं पुनः अपनी पूर्व-स्थिति में लौट आता हूँ, वह विलक्षण होता है। मुझे इन महापुरुष का सान्निध्य प्राप्त हुआ, इसके लिए मेरी कृतज्ञता फिर से नवीन हो जाती है।

फ़्लोरिडा, अमरीका

अगस्त १९८२ में, मैंने पाँच दिन गणेशपुरी में बिताए थे। मैं बाबा जी से पहली बार मिली थी। उस समय मैं गुरुओं के बारे में कुछ नहीं जानती थी, फिर भी उन पाँच दिनों मैं मैंने अनुभव किया कि बाबा जी वे हैं जो सचमुच विशेष हैं, उनके पास ऐसा ज्ञान व शक्ति है जो मेरे अनुभव से कहीं अधिक है।

२ अक्टूबर की पूर्णिमा की रात्रि को मैं पैरिस के अपने स्टुडिओ में अपना काम कर रही थी, तब अचानक ही मैंने महसूस किया कि प्रेम की एक तेज़ लहर मेरे भीतर उतर रही है और मुझे पूरी तरह अपने में समाती जा रही है। उस क्षण, मुझे पूर्ण निश्चितता से अनुभव हुआ कि बाबा जी ने स्वयं को मेरे अन्दर सदा-सदा के लिए प्रतिष्ठापित कर लिया है। मैं जान गई कि वे मेरे श्रीगुरु हैं। बाद में, पैरिस के सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र पर मुझे ज्ञात हुआ कि उस दिन बाबा जी ने देहत्याग कर दिया। कितना अद्‌भुत आशीर्वाद था यह!

आज मुझे श्रीगुरु की करुणा याद आती है जो एक ऐसे व्यक्ति पर बरसाई गई जो उस समय सिद्धों के जीवन तथा उनकी महानता से पूर्णतः अनजान थी। आज मैं बाबा जी को नमन करती हूँ और असीम कृतज्ञता के साथ उनके जीवन, उनके उपहार का उत्सव मनाती हूँ। मैं उनके प्रेम तथा उनकी धरोहर को नमन करती हूँ जो श्रीगुरुमाई की उपस्थिति व उनकी सिखावनियों के माध्यम से मेरे जीवन का केन्द्रबिन्दु बन गई है।

सटन [क्यूबैक], कॅनडा

२ अक्टूबर की पूर्णिमा की रात्रि को मैं ह्यूस्टन के सिद्धयोग आश्रम में थी। जब हमने बाबा जी की महासमाधि का समाचार सुना तो मैं शोकाकुल हो गई। एक रात पहले मुझे बाबा जी की बहुत याद आ रही थी और उनसे मिलने की बहुत इच्छा हो रही थी। मैं संकीर्तन के लिए ध्यान-कक्ष में गई और दो दिन तक बाहर नहीं आ सकी, न तो सोने के लिए और न ही खाने के लिए। हॉल में संकीर्तन करते समय, मुझे ऐसा महसूस हो रहा था मानो मैं बाबा जी की देह में हूँ।

फिर मेरी प्रिय बहन ने मुझे भारत जाने के लिए हवाई जहाज़ की टिकट भेजी। जब मैं गुरुदेव सिद्धपीठ पहुँची, वहाँ के वातावरण में एक प्रचण्ड शक्ति व्याप्त थी। भक्तों के बीच प्रेम तथा एक-दूसरे का ध्यान रखने की भावना बड़ी प्रबल थी। हमने अपने परमप्रिय बाबा जी को खो दिया था, फिर भी हमने उन्हें खोया नहीं था। उनकी उपस्थिति स्पष्ट व वास्तविक थी, उस वायु से भी अधिक वास्तविक जिसमें हम साँस ले रहे थे और उस सूर्य से भी अधिक वास्तविक जिसे हम अपनी त्वचा

पर महसूस कर रहे थे। बाबा जी पहले जैसे ही उस समय भी हमारे साथ थे, आज भी हैं और— हमेशा रहेंगे।

फ़्लोरिडा, अमरीका

भारत में बाबा मुक्तानन्द के पास नौ महीने बिताने के बाद, १९८२ के पतझड़ के दौरान, मैं छः महीनों से लॉस एन्जलिस में रह रही थी। मुझे बाबा जी की तथा आश्रम-जीवन की बहुत याद आ रही थी।

२ अक्टूबर की पूर्णिमा की सुबह, मुझे समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। अतः मैं तुरन्त ही सैन्टा मोनिका के सिद्धयोग आश्रम के लिए निकल गई, जहाँ तीस दिनों का नामसंकीर्तन सप्ताह चल रहा था। उस माह मैंने सेवा अर्पित करने तथा सप्ताह में संकीर्तन करने में अपनी रातें व्यतीत कीं। दिव्य शक्ति प्रत्यक्ष महसूस हो रही थी, जिसने आश्रम को स्वर्ग बना दिया था। बाबा जी का प्रेम, पूर्ण रूप से विद्यमान था और वे भी *हमारे साथ* संकीर्तन कर रहे थे।

तीसरा सप्ताह आते-आते, मेरी आत्मा एक ऐसा जीवन जीने की महान ललक से भर गई जो आध्यात्मिक साधना के प्रति *पूरी तरह* से समर्पित हो। इसलिए मैंने आश्रम स्टाफ़ में किसी भी उपलब्ध सेवा-स्थान पर सेवा अर्पित करने की इच्छा से आवेदन किया। मुझे शक्तिपात प्राप्त होने की तीसरी वर्षगाँठ पर स्टाफ़ में पूर्णकालिक सेवा के लिए स्वीकृति मिल गई! यह बाबा जी की ओर से मेरे लिए एक प्रेमभरा उपहार था—मेरी गहनतम प्रार्थना का उत्तर था। अपनी आध्यात्मिक यात्रा पर केन्द्रण करने और गुरुमाई जी का मार्गदर्शन व उनके दर्शन प्राप्त करने का यह एक दुर्लभ अवसर था।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

१ अक्टूबर, १९८२ को मैंने काम से लौटकर, अपनी कार पार्क की। थोड़ी देर बाद मैं किसी दूसरे काम से कार की तरफ़ आ रही थी, तभी मैं उदित होते चन्द्रमा को देखकर अवाक् हो गई और देखती ही रह गई। इससे पहले मैंने ऐसा चन्द्रमा कभी नहीं देखा था। वह सबसे बड़ा, सबसे उज्ज्वल और सबसे मनमोहक पूर्ण चन्द्र था। मैं इतनी मन्त्रमुग्ध हो गई कि मैं घुटनों के बल वहीं बैठ गई व उसे प्रणाम किया।

२ अक्टूबर की सुबह मैंने सुना कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। तब जाकर मैं समझ पाई कि पिछली रात को चन्द्रमा इतना तेजोमय व अलौकिक क्यों था। प्रकृति इस असाधारण घटना की—एक महापुरुष के ब्रह्माण्डीय चेतना में विलीन होने की—अभिस्वीकृति दे रही थी।

मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, उनके महिमामय जीवन के लिए तथा शक्तिपात के अनमोल महाप्रसाद के लिए जो उन्होंने मुक्तरूप से व उदारहृदय से सबको प्रदान किया।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को मेरे माता-पिता के घर में हम साप्ताहिक सत्संग कर रहे थे। संकीर्तन के दौरान मैंने कहीं कुछ गिरने की आवाज़ सुनी; जब मैंने अपनी आँखें खोलीं तो देखा कि हॉल के पीछे वाले भाग में बाबा जी की एक फ़ोटो दीवार से नीचे ज़मीन पर गिर गई है। एक व्यक्ति ने उसे उठाकर फिर से हॉल में पीछे की ओर बने पूजा-स्थान पर रख दिया। फिर हमने आनन्द-मस्ती के साथ और अत्यन्त भावविभोर होकर संकीर्तन व ध्यान का आनन्द लिया।

उन दिनों हम ध्यान के बाद, सत्संग के अपने अनुभव एक-दूसरे से बाँटा करते थे। मेरे पिता जी ने बताया कि ध्यान के समय उन्होंने बाहर बरसात शुरू होने की ध्वनि सुनी थी और बारिश की हर बूँद के गिरने पर 'ॐ नमः शिवाय' की ध्वनि सुनाई देती थी। मैं आश्चर्य से भर गया, मैंने महसूस किया कि यह सत्संग सर्वाधिक विशेष और असामान्य था।

बाद में, उसी शाम केन्द्र के कोऑर्डिनेटर ने फ़ोन करके बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। शुरू में, मैं बहुत उदास हो गया। किन्तु जब मैंने बाद में मनन किया तो समझ आया कि बाबा जी ने उसी समय के आस-पास महासमाधि ली थी जब हमारा सत्संग चल रहा था। हम सभी ने उनकी उपस्थिति को बड़े ही शक्तिशाली तरीक़े से अनुभव किया था और मैंने बाबा जी की अपार करुणा के लिए उनके प्रति अत्यन्त कृतज्ञता का अनुभव किया।

लन्दन, यूनाइटेड किंग्डम

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं सो रही थी, मीठे सपने देख रही थी। तभी मेरे सामने एक सुनहरा त्रिकोण उभरा। उस त्रिकोण के भीतर, सुन्दर सुनहरी पादुकाएँ, श्रीगुरु की पादुकाएँ थीं।

मैं यह दृश्य देखकर भावविभोर हो रही थी कि तभी मेरे फ़ोन की घण्टी बजी। न चाहते हुए भी मैं स्वप्न से जाग गई और मैंने फ़ोन उठाया। मेरी मित्र ने बताया कि बाबा जी ने कुछ घण्टों पहले गुरुदेव सिद्धपीठ में महासमाधि ले ली है। मैं स्तब्ध रह गई, इस बात ने मुझे गहराई तक छू लिया कि बाबा जी मुझे विदाई का उपहार दे गए हैं। जाते-जाते उन्होंने स्वयं को मेरे अन्तर में स्थापित कर दिया था, और स्वप्न का वह अद्भुत दृष्टान्त इसी बात का प्रतीक था।

मैं जानती हूँ कि बाबा जी सदैव हमारे साथ हैं।

न्यूयॉर्क, अमरीका

वर्ष १९८२ में, मैं सिद्धयोग पथ पर नई साधक थी, और गुरुदेव सिद्धपीठ में सेवा अर्पित कर रही थी। बाबा जी के महासमाधि लेने के कुछ दिन पहले, मैं जब भी आँखें बन्द करती मुझे उनके मुखमण्डल के दर्शन होते। उस शनिवार दोपहर को, अन्तिम बार बाबा जी के भौतिक रूप में दर्शन

के दौरान मैं हॉल के पिछले भाग में आँखें बन्द कर बैठी थी, तब मैंने अपने अन्तर में उनके दर्शन किए। इस प्रकार अन्तर में उनके सान्निध्य में होने से मैं पूरी तरह से सन्तुष्टि का अनुभव कर रही थी।

उस समय मैं वीडिओ कर्मी के रूप में अन्य सेवाकर्ताओं के साथ सेवा अर्पित कर रही थी और उसी रात बाबा जी के महासमाधि लेने के बाद मेरी सेवा थी—जब भी आवश्यकता हो, वीडिओ उपकरण उपलब्ध कराना। जब मैं तत्परता से इस कार्य में लगी हुई थी, मेरे अन्दर अतीव आनन्द उमड़ने लगा; यह अविश्वसनीय था। फिर मेरे मन में विचार आया और मैंने अपने आप से कहा, "रुको, तुम्हें तो उदास होना चाहिए। बाबा जी ने अभी-अभी देह त्यागी है!" इसके बजाय, तुरन्त ही मेरे अन्दर से यह समझ उभरी कि बाबा जी शरीर नहीं हैं। वे मेरे साथ हैं। उनका प्रेम व उनकी उपस्थिति मेरे अन्तर में विद्यमान है।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की शाम, मैं अपने घर से मेलबोर्न स्थित सिद्धयोग आश्रम में सेवा अर्पित करने के लिए जा रही थी। सड़क पर चलते-चलते मेरी दृष्टि चन्द्रमा पर गई। वह इतना सौन्दर्यमय था कि शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं चन्द्रमा से प्रार्थना करने लगी जो कि मैंने इससे पहले—या उसके बाद भी—कभी नहीं की थी। मैंने प्रार्थना की, "हे चन्द्रमा, कुछ ही घण्टों बाद तुम गुरुदेव सिद्धपीठ के गुरुचौक में अपनी चाँदनी बिखेरोगे। कृपया मेरे बाबा जी का ध्यान रखना।"

बाद में मुझे इस संयोग पर आश्चर्य हुआ, क्योंकि दूसरे दिन, श्रीगुरुगीता के पाठ के बाद, हमें बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। फिर हमें 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' की धुन आरम्भ करने के लिए कहा गया। मैं जो तम्बूरा बजा रही थी, उसे मैंने गले से लगा लिया, फिर हार्मोनियम वादक ने मुझे हार्मोनियम बजाने के लिए कहा। मुझे नहीं मालूम था कि मैं कितनी देर तक बजाऊँगी, किन्तु इससे अब कोई फ़र्क नहीं पड़ता। मैं स्वयं को धन्य महसूस कर रही थी कि ऐसे मंगलमय समय पर मैं बाबा जी व उनके भक्तों की सेवा कर पा रही हूँ।

चौदह दिन के सप्ताह के दौरान मुझे जिस गहरे हर्ष व माधुर्य का अनुभव हुआ वह असाधारण था। मुझे कोई खिन्नता या उदासी महसूस नहीं हुई। केवल एक सुन्दर, सुमधुर आनन्द जिसने मुझे अपने प्रेमभरे आलिंगन में समाए रखा और जो मेरे अन्दर गहरे से गहरा होता गया, मुझे रूपान्तरित करता रहा।

ऑकलैन्ड, न्यूज़ीलैन्ड

वर्ष १९८२ के अगस्त के अन्त में मैं मैसेच्यूसेट्स् के कैम्ब्रिज शहर में रहा करती थी। एक दिन टहलते समय मुझे अपने अन्तर में स्पष्ट रूप से 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र सुनाई देने लगा। उस समय, मैं अपने जीवन का एक महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने का प्रयत्न कर रही थी। मैंने कुछ समय के लिए, बोस्टन के सिद्धयोग आश्रम में रहने का निर्णय लिया।

आश्रम आए हुए अभी एक सप्ताह भी नहीं हुआ था कि हमने बाबा जी के महासमाधि लेने का समाचार सुना। मुझे लगा कि बाबा जी ने ही मुझे आश्रम बुलाया है। मैंने अपने मन को संकीर्तन व ध्यान में लीन कर दिया। मैं स्वयं को बाबा जी के बहुत निकट महसूस करने लगी। संकीर्तन करते समय मैंने अनुभव किया कि जन्म-जन्मान्तरों के दुःख तथा कष्ट मेरी आत्मा में से धुलते जा रहे हैं, निकलते जा रहे हैं। मैं लगभग छः महीने वहाँ रही।

मुझे महसूस होता है कि तब से बाबा जी मेरे जीवन को मार्गदर्शित कर रहे हैं। मैं अपने लिए उनके प्रेम को महसूस करती हूँ!

मैसेच्यूसेट्स्, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा का दिन, मेरे कॉलेज परिसर में पतझड़ का एक मनोहर व शानदार दिन था। सूर्य की किरणें पेड़ों के बीच से छनकर आ रही थीं और सारा परिसर लगभग ख़ाली था क्योंकि सभी फुटबॉल का खेल देखने गए थे। मेरी मित्र और मैं हरेभरे मैदान में बैठकर, उस सुन्दरता व शान्ति का आनन्द ले रहे थे और मैं अपनी मित्र को बड़ी खुशी के साथ बाबा जी के बारे में बता रही थी। दो विद्यार्थी हमारे पास आए। मैंने उनका अभिवादन किया व अपने पास बिठाया और उन्हें भी बाबा जी के बारे में बताने लगी!

बाबा जी के बारे में इतनी बातें करने के बाद, मैंने उस शाम स्थानीय सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र पर जाकर सत्संग में भाग लेने का निश्चय किया। जब मैं वहाँ पहुँची तो देखा कि संकीर्तन पहले से ही चल रहा था। मैंने पूछा कि क्या मुझे देर हो गई है; सूत्रधार ने कहा, "अरे क्या तुमने नहीं सुना? आज बाबा जी ने देह त्याग दी है।"

मुझे लगा कि उस शाम बाबा जी स्वयं ही मुझे वहाँ खींच ले गए थे, क्योंकि आम तौर पर मैं सप्ताह के उस दिन सत्संग के लिए नहीं जाती थी। मैं गहन कृतज्ञता से भर गई कि बाबा जी के प्रेम ने इस तरह से मेरा ध्यान रखा।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, मैं एक पार्टी में था। मैंने बाहर बाल्कनी में जाकर सुन्दर चन्द्रमा को देखा। अपने अन्तर में मुझे तीव्रता से बाबा जी की याद आई और मेरे अन्दर एक तड़प जाग गई कि मैं भारत जाकर बाबा जी के आश्रम में उनके सान्निध्य में रहूँ। वह ललक इतनी तीव्र थी कि मेरे आँसू बहने लगे। मैं पार्टी छोड़कर घर चला गया।

उस रात मैंने स्वप्न में स्वयं को गुरुदेव सिद्धपीठ में बाबा जी के साथ देखा। स्वप्न में हम एक-दूसरे का आलिंगन कर रहे थे। फिर मैं जाग गया, मैं प्रेम से आकण्ठ भर चुका था।

सुबह फ़ोन की घण्टी बजी। किसी ने बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। तुरन्त ही मुझे अपना स्वप्न याद आया और मैं समझ गया कि बाबा जी का प्रेम अब और भी प्रबलता से बढ़ता रहेगा।

फ़ेलेन, जर्मनी

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मुझे फ़ोन पर बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। आश्चर्य की बात यह हुई कि दुःख अनुभव करने के बजाय मुझे इतने आनन्द का अनुभव होने लगा कि मैं उठकर नाचने लगा। मैं गोल-गोल घूमने लगा, मैं स्वयं को रोक ही नहीं पा रहा था। मैं बाहर जाने से झिझक रहा था क्योंकि मैं जानता था कि मैं अपने इस आनन्द को छुपा नहीं सकूँगा और गलियों में नाचने लग जाऊँगा! इसलिए में घर में ही रहा और बाबा जी के अवर्णनीय आनन्द में सारा दिन प्रेम से नाचता रहा।

मुझे अत्यन्त प्रबलता से बाबा जी की उपस्थिति महसूस हो रही थी।

फ़्लोरिडा, अमरीका

बाबा जी की महासमाधि का समाचार सुनकर, मुझे बहुत गहरा सदमा लगा। मैं तुरन्त ही बोस्टन के सिद्धयोग आश्रम के लिए निकल पड़ी क्योंकि मुझे लगा कि अपना सन्तुलन पाने का मेरे पास एक ही तरीक़ा है, वह है सत्संग में होना और ‘ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय’ का संकीर्तन करना। हमने आश्रम के अत्यन्त शक्तिपूरित वातावरण में एक सप्ताह तक संकीर्तन किया।

मैं छः वर्ष पहले ही बाबा जी से मिली थी और मेरा ऐसा मानना था कि श्रीगुरु का भौतिक रूप ही मुझे अपने हृदय से जोड़ता है। किन्तु उस सप्ताह संकीर्तन करते-करते मुझे यह समझ आने लगा कि शायद कुछ और भी है जो मेरे लिए सीखना बाक़ी है।

कई दिन मेरे आँसू बहते रहे; उन आँसुओं से तथा बाबा जी की कृपा व प्रेम से मैंने सीखा कि भले ही बाबा जी अपना शरीर छोड़कर गए हैं, किन्तु आत्मा कभी नहीं मरती। अब बाबा जी सदा मेरे हृदय में मेरे साथ रहते हैं।

मैसेच्यूसेट्स्, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मेरी एक प्रिय मित्र एवं सिद्धयोगी ने मुझे अपने नए घर के गृहप्रवेश के लिए भोजन हेतु आमन्त्रित किया था। चूँकि घर में कोई फर्नीचर नहीं था, इसलिए हमने नीचे फ़र्श पर बैठकर ही "पिकनिक" मनाई। मेरी मित्र स्वादिष्ट भोजन बनाती है। हर नए व्यंजन को परोसते समय वह कहती, "बाबा जी को यह व्यंजन ऐसा ही बना हुआ पसन्द है," या "बाबा इसी तरह भिण्डी भाजी बनाते हैं।"

मैंने कहा, "मुझे यक़ीन है कि तुमने यह खाना बाबा जी के लिए बनाया है और मुझे ख़ुशी है कि उनकी ओर से मैं इसे खाऊँगी।"

उसी शाम, हमने सुना कि रात में बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। हमें ऐसा लगा जैसे बाबा जी की विदाई और ब्रह्मलीन होने के उनके जन्म-जन्मान्तरों के लक्ष्य के सम्मान में हमने दोपहर को उस भोज का आनन्द लिया था। तथापि बाबा जी ने "यह संसार छोड़ा नहीं।" निस्सन्देह, वे तब से मेरे जीवन को मार्गदर्शित करते रहे हैं, अकसर उन शब्दों के माध्यम से जो नींद से जागते समय या ध्यान से उठते समय मेरे मन में गूँजते हैं।

लिटिलहैम्पटन, यूनाइटेड किंग्डम

वर्ष १९८२ में मैं सिद्धयोग पथ पर नई थी। जितना हो सकता, मैं पढ़ती रहती थी और स्थानीय सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र में जाकर संकीर्तन करती थी। मैं बाबा जी से व्यक्तिगत रूप से कभी नहीं मिली थी किन्तु जब एक सिद्धयोग स्वामी जी ने हमारे क्षेत्र में आकर एक विशेष कार्यक्रम आयोजित किया था तब मुझे मन्त्र द्वारा शक्तिपात दीक्षा प्राप्त हुई थी।

जिस दिन बाबा मुक्तानन्द ने महासमाधि ली, उस दिन मैं अपने ध्यान-कक्ष में बैठी हुई थी। मैं ध्यान करने का प्रयत्न कर रही थी किन्तु रोने और बाबा जी के चित्र के सामने नमन करने के अलावा मैं कुछ भी नहीं कर पा रही थी। यह सब स्वाभाविक रीति से, अपने आप हो रहा था। उस शाम संकीर्तन के लिए ध्यान-केन्द्र पर आकर ही मुझे पता चला कि बाबा जी ने देहत्याग कर दिया है। फिर भी उस दिन जब मैं ध्यान-कक्ष में बैठी थी तब मेरे अन्दर कुछ था जो इस बात को जानता था।

जॉर्जिया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात्रि को मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में थी। उस दिन दोपहर में हमने गुरुचौक में मौन दर्शन किए और रात में सोने जाने से पहले एक वीडिओ देखा। रात्रि ११ बजे के कुछ ही समय बाद मुझे अचानक कुछ स्पर्श-सा महसूस हुआ, जिससे मेरी नींद खुल गई और मैं अपने बिस्तर पर बैठ गई। फिर मैं सो नहीं सकी। बाद में भोर के समय, एक और संगीत सेवाकर्ता के साथ मैं भगवान नित्यानन्द मन्दिर में गई और हार्मोनियम निकाला क्योंकि मैं संगीत विभाग में सेवा अर्पित करती थी। हमने संकीर्तन करने का निश्चय किया।

मैं 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' की धुन बजाने लगी और हमने मन्दिर में संकीर्तन आरम्भ किया। बाद में संकीर्तन गुरुचौक में होने लगा और यह दिनोंदिन अधिकाधिक भावपूर्ण और रसपूर्ण होता गया। वह संकीर्तन एक माह तक चलने वाले सप्ताह में बदल गया क्योंकि उस समय हज़ारों लोग बाबा जी के अन्तिम दर्शनों के लिए आश्रम आ रहे थे।

मुझे याद है कि वह संकीर्तन हममें से कई भक्तों को बाबा जी के प्रेम की लहरों के साथ बहा ले गया और हमें अपने हृदय में लाकर वहीं स्थिर कर दिया—जिसे बाबा जी ने न कभी छोड़ा और न कभी छोड़ेंगे। जैसे-जैसे हम अपने परमप्रिय बाबा जी के सुन्दर स्वरूप से विहीन पहला माह बिताते जा रहे थे, उनकी शक्ति का वेग और भी प्रबल होता गया व उस शक्ति की उपस्थिति का एहसास इतना बढ़ता गया कि इससे पहले मैंने कभी ऐसा अनुभव नहीं किया था; मैं यह जान गई कि सच तो यह है कि बाबा जी कहीं गए ही नहीं हैं।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात, जब बाबा जी ने महासमाधि ली, मैं सिडनी के सिद्धयोग आश्रम में रह रही थी। इस समाचार से मैं बहुत दुःखी हुई क्योंकि मुझे लगा कि मैंने अपने श्रीगुरु को खो दिया है।

हम प्रतिदिन, 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' की धुन गाते थे। तीसरी रात मैं प्रातः ३ बजे जाग गई। सब कुछ शान्त था और सभी सो रहे थे। अचानक मेरा हृदय तेज़ी-से धड़कने लगा। मुझे लगा, "बाबा जी यहाँ है!" मेरे शरीर में शक्ति के स्पन्दन बहुत प्रबल थे।

फिर मैंने बाबा जी की आवाज़ सुनी। मैं अपने हृदय में बाबा जी की आवाज़ को शब्दशः प्रकम्पित होता हुआ महसूस कर सकती थी। वे हिन्दी में बोल रहे थे। मैं स्वागत के उस वाक्यांश को पहचान गई जो वे हमेशा अपने प्रवचन की शुरुआत में बोलते थे, जैसा कि आज गुरुमाई जी बोलती हैं "सबका बड़े सम्मान के साथ प्रेम से हार्दिक स्वागत।" ये शब्द कुछ देर तक दोहराते हुए सुनाई देते रहे और फिर बन्द हो गए। मैं जान गई कि मुझे अभी-अभी बाबा जी के दर्शन हुए हैं।

वर्षों बाद, मुझे समझ आया कि बाबा जी की शक्ति को महसूस करने और उनकी आवाज़ को सुनने का यह अनुभव, श्रीगुरु के सूक्ष्म रूप का मेरे हृदय में प्रवेश करने का अनुभव था। जैसा कि शास्त्र सिखाते हैं, मैं अपने श्रीगुरु को खो दूँ, यह सर्वथा असम्भव है।

कॅसलमैन, ऑस्ट्रेलिया

शुक्रवार, १ अक्टूबर १९८२ की शाम किसी काम से बाहर जाने के लिए जैसे ही मैंने दरवाज़ा खोला, पूर्णिमा के चन्द्रमा की भव्यता और दीप्ति को देखकर मैं अचम्भित रह गई। मैंने अब तक इतना विशाल और इतना चमकीला चन्द्रमा कभी नहीं देखा था। यह आकाश में नीचे क्षितिज की ओर स्थिर था और इसका नारंगी रंग, चन्द्रमा के बजाय अस्त होते सूर्य के जैसा लग रहा था।

मैं वास्तव में ज़मीन पर बैठ गई और मैंने उसे प्रणाम किया। मैंने प्रणाम करने के बारे में सोचा नहीं था; यह अनायास ही, बस अपने आप हो गया।

गाड़ी चलाते समय मेरे हृदय से प्रेम व आनन्द छलक रहा था। उसे व्यक्त करने का एक ही तरीक़ा मेरे अन्दर से उभरा, वह था चन्द्रमा के बारे में मुझे जो गाना मालूम था उसे मैं गाऊँ; "Shine On, Harvest Moon," [फसल की कटाई के दौरान उदित होने वाले हे चन्द्रमा, अपनी पूरी तेजस्विता से चमकते रहो] और मैं इसे पूरे रास्ते गाती रही।

दूसरे दिन २ अक्टूबर की सुबह, मेरे फ़ोन की घण्टी बजी और मुझे बताया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मैं तुरन्त समझ गई कि कल रात मैंने जिस चन्द्रमा के दर्शन किए थे, वह इस अविस्मरणीय घटना का प्रतीक था।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२, पूर्णिमा को मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में थी। जब मैंने सुना कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है, मुझे विश्वास नहीं हुआ। किन्तु जब मैं ध्यान-कक्ष की ओर गई, जो अब बाबा जी का समाधि-मन्दिर है, तो मैंने लोगों को उस जगह को तैयार करते हुए देखा। तब मुझे इस सच्चाई पर विश्वास हुआ कि बाबा जी ने देहत्याग कर दिया है।

समय के साथ, जैसे-जैसे मैं इस वास्तविकता को स्वीकार करती गई कि बाबा जी का मनोहर व आनन्दमय भौतिक स्वरूप, अब इस धरती पर कृपा की वर्षा करने के लिए विद्यमान नहीं है, वैसे-वैसे एक कोमल तथा प्रेम भरी भावना मेरे हृदय को सिक्त करने लगी। मुझे पक्का विश्वास हो गया कि यह भाव, मेरे अन्तर में बाबा जी की उपस्थिति ही है। उस समय मुझे विश्वास हुआ कि बाबा जी मेरे साथ हैं और हमेशा रहेंगे।

सॉन फ़ेलीपे, मैक्सिको

मैं बाबा मुक्तानन्द से सबसे पहले सन् १९७६ की सर्दियों में गुरुदेव सिद्धपीठ में मिला था।

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात्रि को मैं सऊदी अरब में काम कर रहा था। खुरैस गैस फील्ड में चलते हुए, मेरे समक्ष एक दृश्य उभरा और उसे देखकर मैं बीच रास्ते में ही ठिठक गया। मैंने देखा कि बाबा जी बिस्तर पर लेटे हैं और सिद्धयोग के स्वामीगण उनके आस-पास खड़े हैं। मैंने महसूस किया कि मैं भी उन सबके बीच वहाँ उपस्थित हूँ और मुझे पता था कि यह बाबा जी के विदा होने की बेला है। मैं जान गया कि हालाँकि उन्होंने अपनी देह का त्याग कर दिया है फिर भी बाबा जी वास्तव में जो हैं, वह तत्त्व सदा-सदा के लिए हमारे साथ है।

लूइज़ियाना, अमरीका

वर्ष १९८१-१९८२ में गुरुदेव सिद्धपीठ में लगभग एक वर्ष बाबा जी के साथ व्यतीत करने के बाद मैं अपनी कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने मैन में अपने घर वापस आया। २ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन मैं चट्टानों पर बैठा अटलान्टिक महासागर को देख रहा था। मैंने अभी-अभी श्रीगुरुगीता का पाठ समाप्त किया था और किनारे पर उठती-गिरती लहरों को देख रहा था, तभी श्रद्धायुक्त आदर,

आश्चर्य, प्रेम व कृतज्ञता के प्रबल भाव ने मुझे घेर लिया। मुझे अनुभव होने लगा कि मैं आस-पास की हर चीज़ के साथ पूर्णरूप से एकाकार हूँ।

घर पहुँचने पर समाचार मिला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। इस समाचार को सुनते ही मैंने महसूस किया कि मेरा हृदय विस्तृत हो रहा है। हालाँकि, यह सोचकर कि मुझे बाबा जी के भौतिक स्वरूप के अब कभी दर्शन नहीं होंगे, मैं उदास था और मेरी आँखों में आँसू बह रहे थे, फिर भी मैं यह भी जानता था कि मेरा मार्गदर्शन करने व मेरा संरक्षण करने के लिए वे हमेशा मौजूद रहेंगे। और मैं यह स्पष्टरूप से जान गया कि उन्होंने अपने आशीर्वादों का सम्पूर्ण महासागर परमप्रिय गुरुमाई जी को पहले ही सौंप दिया था, और वे विश्व को एक और महान सिद्ध का मार्गदर्शन, करुणा व प्रेम प्रदान किए बिना नहीं जाएँगे।

हवाई, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२, पूर्णिमा की शाम को मैं सोफ़े पर बैठकर बाबा मुक्तानन्द की एक पुस्तक पढ़ रही थी और सिद्धयोग संकीर्तन का टेप सुन रही थी। मैंने खिड़की के बाहर देखा और मेरी दृष्टि चन्द्रमा पर पड़ी। मेरे हृदय में प्रेम तथा आनन्द का एक अद्‌भुत भाव जाग उठा।

बाद में, जब फ़ोन की घण्टी बजी, तब ज्ञात हुआ कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मुझे लगा कि यह लगभग उसी समय हुआ होगा जिस समय मैं चन्द्रमा को देख रही थी और अपने हृदय में उमड़ते अपार आनन्द को महसूस कर रही थी।

मॅल्म, स्वीडन

अक्टूबर १९८२ में, मैं अपने पति के साथ ओकलैन्ड, कैलिफ़ोर्निया में रहा करती थी। एक दिन ध्यान के समय, मुझे कमरे में प्रबलता से बाबा जी की उपस्थिति की अनुभूति हुई; मैं उनके प्रति प्रेमभाव से अभिभूत हो गई। अपने हृदय में हुए इस शक्तिशाली दर्शन के अनुभव से मैं रो पड़ी, मैं सिसक-सिसककर रोती रही। मेरे पति दौड़कर कमरे में आए और पूछा, "क्या हुआ?"

मैंने जैसे-तैसे कहा, "कुछ नहीं! बाबा जी यहीं हैं!"

अगली सुबह मुझे पता चला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। बाद में, मुझे उनके महाप्रयाण का सही समय पता चला—यह वही समय था जब मैंने अपने अन्दर उमड़ते उनके शाश्वत, पूर्ण प्रेम को महसूस किया था।

इसके लिए व हर क्षण उनकी जो अनन्त कृपा मुझ पर बनी रहती है, उसके लिए मैं सदैव उनकी कृतज्ञ रहूँगी; अपनी कृतज्ञता को मैं शायद ही कभी शब्दों में व्यक्त कर पाऊँगी।

वॉशिंग्टन, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८३ को स्थानीय सिद्धयोग संकीर्तन एवं ध्यान-केन्द्र में, हमने बाबा जी की महासमाधि की प्रथम पुण्यतिथि मनाई। बाद में, उसी माह महासमाधि की चान्द्र पुण्यतिथि आई, पर मुझे याद नहीं रही।

उस रात जब मैं बिस्तर पर लेटी थी व अर्ध जाग्रत अवस्था में थी, मैंने अपने सिर के बिलकुल ऊपर एक जगमगाता श्वेत प्रकाश देखा। वह श्वेत प्रकाश एक प्रचण्ड प्रवाह की तरह मेरे सिर में प्रवेश कर गया और मेरे सीने से होता हुआ ऊपर मेरे हाथों में बहने लगा; उसकी शक्ति से मेरे हाथ ऊपर उठ गए।

फिर, एकदम स्पष्ट रूप से बाबा जी मेरे समक्ष प्रकट हुए, जैसे वे गुरुदेव सिद्धपीठ में समाधि-मन्दिर की दीवार पर लगे चित्र में दिखाई देते हैं—जिस चित्र को मैंने अब तक देखा नहीं था। मुझे तुरन्त ही ध्यान आया कि आज कौन-सा दिन है। मैं अपनी पूजा में गई और उन्हें प्रणाम किया—मैं कृतज्ञ थी कि मेरे श्रीगुरु ने मुझे याद रखा।

उस अनुभव से, मुझे श्रीगुरु के साथ अपने सम्बन्ध पर, उनकी महानता पर और इस पथ की सत्यता पर पूर्ण विश्वास हो गया।

इलिनॉए, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२, पूर्णिमा की शाम, मेरी मँगेतर और मैं, न्यूयॉर्क की हडसन नदी की घाटी की एक दिन की सैर कर गाड़ी से वापस न्यूयॉर्क शहर लौट रहे थे। वह पतझड़ ऋतु की ख़ूबसूरत जादुई शाम थी। जब हम गाड़ी से जा रहे थे तब दो घाटियों के बीच से गुज़रते समय मैंने पूर्णिमा के चन्द्रमा को उदित होते देखा।

यह सर्वाधिक पूर्ण, देदीप्यमान, उज्ज्वल, तेजोमय चन्द्रमा था जो अपने नीचे व ऊपर के बादलों को आलोकित करते हुए मानो उन्हें एक चमकीली झालर लगा रहा था। मैं अवाक् होकर, आश्चर्य से देखता ही रह गया। रास्ते के किनारे की पगडण्डी पर गाड़ियाँ खड़ी करके लोग गाड़ी से बाहर निकलकर इस जादुई दृश्य को निहार रहे थे। आश्चर्य से मैंने सोचा, "आज तक मैंने ऐसा कुछ नहीं देखा है जिसकी सुन्दरता इतनी परिपूर्ण हो।" एक घण्टे के अन्दर, हम मैनहैटन के सिद्धयोग आश्रम पहुँचे जहाँ हमें पता चला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मुझे सदमा लगा। फिर भी, रास्ते में मैंने जो दृश्य देखा था, उसे याद करके मैंने अपने अन्तर में एक गहन व्यापकता का अनुभव भी किया। मैं समझ गया कि बाबा जी के ब्रह्मलीन होने का अर्थ था कि वे वास्तव में हर एक के साथ एकाकार हो गए हैं। रात्रि का आकाश भी उनकी दिव्य चेतना के प्रकाश को प्रतिबिम्बित कर रहा था।

ओहायो, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की सुबह, मैं मेलबोर्न के सिद्धयोग आश्रम में आयोजित शक्तिपात ध्यान-शिविर में भाग लेने के लिए तैयार हो रहा था, उस समय मेरी पत्नी के पास फ़ोन आया। शान्ति-से मेरे पास आकर उसने बताया कि आश्रम से एक सेवाकर्ता ने फ़ोन पर बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। ध्यान-शिविर अब नहीं होगा, और उसके स्थान पर हम बाबा जी के नाम का संकीर्तन करेंगे।

जैसे ही मैंने बाबा जी की महासमाधि का समाचार सुना एक आश्चर्यजनक बात हुई : प्रेम का एक अबाधित प्रवाह मेरे भीतर बहने लगा, मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मैंने इससे पहले कभी भी ऐसी अद्‌भुत अवस्था का अनुभव नहीं किया था, अतः मैं निःशब्द होकर अपनी पत्नी की ओर देखता रहा।

फिर हम दोनों को याद आया कि बाबा जी ने कहा था कि जब वे अपने शरीर को छोड़कर जाएँगे तब वे सर्वत्र अपने भक्तों के हृदय में समा जाएँगे। मैंने महसूस किया उस समय मेरे साथ ठीक ऐसा ही हो रहा था।

फिर, जब हमने पहली बार 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' का संकीर्तन किया, आँसू की एक बूँद से मेरी आँखें नम हो गईं। यह ख़ुशी का आँसू था। मैंने सोचा, शोक करने की वजह ही क्या है? बाबा जी तो सदा के लिए मेरे हृदय में समा गए हैं।

नॉर्थ कैरोलिना, अमरीका

शनिवार दोपहर को बरगद के पेड़ के नीचे खड़े होकर जब मैंने देखा तो बाबा जी अपनी गोल्फ़ कार्ट में वहाँ से गुजरे। मुझे अपने आस-पास की हर चीज़ में, पेड़ों, पत्तियों, धूल में उनका चेहरा दिखने लगा।

उस रात अपने मुख में एक मधुर स्वाद के साथ मेरी नींद खुल गई। मेरा पूरा शरीर अतीव आनन्द से ओत-प्रोत था और मेरे सिर के ऊपरी भाग में तीव्र स्पन्दन हो रहे थे। मुझे बाबा जी की उपस्थिति व उनके प्रेम का बहुत प्रबलता से अनुभव हो रहा था। मुझे अगली सुबह पता चला कि जिस समय बाबा जी ने महासमाधि ली थी, ठीक उसी समय रात को मेरी नींद खुली थी।

क्वर्नवाका, मैक्सिको

२ अक्टूबर, १९८२, पूर्णिमा के दिन, मैं ध्यान कर रही थी और पहली बार मैंने गहन स्थिरता, प्रशान्ति तथा आनन्द के स्थान में प्रवेश किया। मैंने स्वयं को प्रेम से घिरा हुआ अनुभव किया, ऐसा लगा कि मैंने ऐसा कुछ पाया है जो मैं सदा से जानती थी कि वह विद्यमान है किन्तु जिसका पूरा अनुभव मैंने आज तक नहीं किया था, कुछ ऐसा जो गहराई से जाना-पहचाना था फिर भी विस्मयजनक रूप से नया-नया था। मैंने सोचा, "ओह, तो यह है ध्यान।" जब मैंने आँखें खोलीं, तब मुझे ऊर्जा से भरपूर तथा अन्दर तक तरोताज़ा महसूस हो रहा था, मानो मेरा आन्तरिक शुद्धिकरण हो चुका हो। आश्चर्य से भरी मैं अपने पति को यह बताने गई—तब उन्होंने मुझे बताया कि उन्हें अभी-अभी पता चला है कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।

न जाने कैसे, मुझे बस पता था कि मैंने बाबा जी की शक्ति का प्रत्यक्ष अनुभव किया है, भले ही मैं भारत से बहुत-बहुत दूर विश्व के दूसरे कोने में रह रही थी। बाबा जी की कृपा से मुझे अपनी अन्तरात्मा का गहरा अनुभव मिला था। इस अनुभव ने मेरा जीवन बदल दिया। उस दिन से मैं नियमित रूप से ध्यान कर रही हूँ और ध्यान मेरे जीवन का आधार बन गया है। इसने मुझे अन्तर्निहित दृढ़ता व स्थिरता से जोड़ दिया है।

वेल्स, यूनाइटेड किंग्डम

सैन्टा मोनिका आश्रम के ध्यान-कक्ष में बहुत शान्ति छाई थी। केवल 'ॐ नमो भगवते नित्यानन्दाय' की धुन के सुकोमल स्वर वातावरण में बह रहे थे। उदासी तथा गहरे प्रेम के मिश्रित भाव प्रबलता से मेरे अन्दर भर गए थे। मैंने ज़मीन पर बैठकर वह शॉल ओढ़ ली जिसे मैं ध्यान के समय ओढ़ती थी।

जब मैं धुन गाने लगी, मुझे बाबा जी का उनके श्रीगुरु के प्रति गहन प्रेम का स्मरण हो आया, जिनके नाम का संकीर्तन हम कर रहे थे। मेरे आँसू बहने लगे। मेरा हृदय प्रेम से भर गया था। रात्रि में किसी

क्षण, मानो किसी अचूक संकेत को पाकर, सभी भक्त एक-साथ कोमलता से 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' गाने लगे। रात्रि गहरी होते-होते धुन तेज़ होती गई, और भी अधिक गहन होती गई और अन्ततः वह पूर्ण उत्साह, प्रेम तथा शान्ति से परिपूर्ण आनन्दमय संकीर्तन में बदल गई। बाबा जी हमारे हृदय में थे; हम जो गा रहे थे उसके हर एक अक्षर के साथ वे हमें आनन्द से भर रहे थे, हमारा उत्थान कर रहे थे। बाबा जी के प्रेम से परिपूर्ण, उनकी कृपा से परिपूर्ण, उनके शब्द मेरे मन में फिर से तैरने लगे : "मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ूँगा।" महोत्सव मनाने का यही सबसे बड़ा कारण था।

फ़्लोरिडा, अमरीका

जब मुझे बाबा जी की महासमाधि का समाचार मिला तो मैंने बाबा जी के समाधि-मन्दिर के दर्शन करने व श्रीगुरुमाई के दर्शन करने के लिए गुरुदेव सिद्धपीठ की यात्रा आरम्भ की। मुझे आशा थी कि बाबा जी मेरे समक्ष प्रकट होंगे, किन्तु मैंने आश्रम के बगीचों में कितना ही देखा, वे प्रकट नहीं हुए।

फिर मुझे अपने पति का एक पत्र मिला कि मेरा नौ साल का बेटा बीमार है और मेरे वहाँ न होने से मेरी माँ उसकी देखभाल करने में उनकी सहायता कर रही हैं। उन्होंने बताया कि वे मेरे बेटे के साथ बात कर रही थीं तभी अचानक बेटे के चेहरे पर बाबा जी का चेहरा उभरा। थोड़ी अभिभूत होकर वे दूसरी ओर देखने लगीं। तीन बार उन्होंने दूसरी ओर देखा और हर बार वापस देखने पर उन्हें बाबा जी का चेहरा ही दिखाई दिया; फिर धीरे-धीरे वह दृष्टान्त धुँधला होता गया। मेरी माँ ने मेरे पति को अपने इस अद्‌भुत दृष्टान्त के बारे में बताया और मेरे पति के अध्ययन-कक्ष में रखी बाबा जी की तस्वीर की ओर इशारा करते हुए कहा, "लेकिन बाबा जी के माथे पर लाल टीका नहीं लगा था।"

बाद में हमें पता चला कि अपनी देह त्यागने से कुछ दिन पहले से बाबा जी ने टीका लगाना छोड़ दिया था। बाबा जी प्रकट अवश्य हुए—और वहाँ प्रकट हुए जहाँ उनकी वास्तव में आवश्यकता थी। मेरी माँ को आशीर्वाद मिल गया और मेरी प्रबल इच्छा पूरी हो गई।

नॉर्थ कैरोलिना, अमरीका

१९८२ की पतझड़ ऋतु के समय मैं ग्रीस के पैटमोस आइलैन्ड में थी; वहाँ जाने के एक ही सप्ताह बाद, २ अक्टूबर की पूर्णिमा की रात, घबराकर मैं नींद से जाग गई। कुछ दिनों बाद मैं एथेन्स के एक होटल में रुकी थी, वहाँ मैंने बाबा जी का एक फ़ोटो दीवार पर लगाया और अंग्रेज़ी अख़बार ख़रीदा। कुछ देर बाद मैंने अख़बार को देखा—वहाँ रखे अख़बार का वही पन्ना खुला हुआ था जिस पर एक शोक-सन्देश था। उस पन्ने पर मेरी नज़र एक छोटे-से अनुच्छेद पर पड़ी जिसमें लिखा था कि २ अक्टूबर को बाबा जी ने देहत्याग कर दिया है।

मुझे धक्का लगा, किन्तु, स्वयं को शान्त रखने के लिए मैंने अपनी स्वाध्याय की पुस्तक निकाली और बाबा जी के चित्र के सामने आँसू भरी आँखों से श्रीगुरुगीता का पाठ करने लगी। तुरन्त ही मुझे शान्ति, सुख तथा कल्याणकारिता के भाव महसूस होने लगे। अगले दिन सुबह जब मैं एथेन्स की गलियों में घूम रही थी, मुझे लोगों के चेहरों में, मकानों के अग्रभाग में, पेड़ों में बाबा जी का चेहरा दिखाई दिया—बाबा जी हर जगह पर थे और यह विश्व केवल प्रेम ही था।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

सिद्धयोग पथ का अनुसरण आरम्भ करने से वर्षों पहले सन् १९८२ में, एक दिन मैं अपने कमरे में लेटी थी और मौन रूप से ॐ का जप कर रही थी। इस स्वर का जप मुझे गहरे ध्यान में ले गया। ध्यान से बाहर आकर आँखें खोलने पर मैंने पाया कि मेरे हृदय से एक तेजोमय सुनहरा प्रकाश निकल रहा है और मेरे पूरे शरीर के चारों ओर व्याप्त हो गया है। मैं जिस भी वस्तु को स्पर्श करती वह इस सुनहरे प्रकाश से भर जाती व ढक जाती : मेरी पुस्तकें, नोटबुक, पेन, कपड़े, कुर्सी—सब कुछ! फिर वह प्रकाश पूरे कमरे में फैल गया और मुझे आनन्द व हल्केपन से भरकर धीरे-धीरे कम होता गया।

वर्ष १९८९ में, मैंने अपनी सिद्धयोग साधना शुरू की। बाद में, मैंने एक पुस्तक में पढ़ा जिसमें बाबा जी ने समझाया था कि जब श्रीगुरु महासमाधि लेते हैं तो वे अपने शिष्यों में प्रवेश कर जाते हैं। जब मैंने ध्यान की अपनी जर्नल को फिर से पढ़ा, मैंने पाया कि वर्षों पहले मुझे सुनहरे प्रकाश का जो अनुभव हुआ था वह २ अक्टूबर, १९८२ को ही हुआ था—वही दिन जब बाबा जी ने महासमाधि ली थी।

मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि वे उस दिन प्रकाश के रूप में मुझमें समा गए और कुछ वर्षों बाद वे मुझे गुरुमाई जी के पास ले आए।

फ़ोर्-दु-फ़्रांस, मार्टिनिक

२ अक्टूबर, १९८२, की पूर्णिमा के दिन मैं अपने शहर के घर से गाँव के घर जाने के लिए निकला था। उस दिन दोपहर को जब मैं प्रकृति के बीच टहलता हुआ जा रहा था, छोटे-छोटे पक्षियों का एक समूह चक्कर लगाता हुआ और चहचहाता हुआ मेरे सिर के ऊपर मँडराने लगा। मैं सहज ही 'ॐ नमो भगवते मुक्तानन्दाय' गाने लगा। उसी शाम मैंने पूर्ण चन्द्र को देखा, वह असाधारण रूप से उज्ज्वल था; उसे देखकर मुझे बाबा जी की याद आई। फिर मैं सो गया।

आधी रात को, अचानक मुझे एक ज़ोर की आवाज़ सुनाई दी। ऐसा लग रहा था कि वह मेरे अन्तर की गहराई से आ रही है। मैं बाबा जी की आवाज़ को पहचान गया, वे 'ॐ नमः शिवाय' जप रहे थे। मैं अचम्भित होकर खड़ा हो गया। फिर मैंने सुना, बाबा जी मुझसे कह रहे हैं, "जब भी तुम्हें मेरे साथ होने का मन हो, तो बस नाम जपो।"

शहर लौटने पर मुझे एक मित्र का नोट मिला जिसमें लिखा था, "बाबा जी ने महासमाधि ले ली है।" तब मुझे पिछली रात के अनुभव का महत्त्व समझ में आया और यह भी समझ में आया कि अपने प्रेम व करुणावश उन्होंने मुझे इस शक्तिशाली व अभूतपूर्व घटना के लिए तैयार कर दिया था।

मैं बाबा जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, मेरे हृदय में उनकी शाश्वत उपस्थिति रूपी सर्वाधिक अनमोल भेंट मुझे देने के लिए।

श्री मुक्तानन्द आश्रम के एक स्टाफ़ सदस्य

अक्टूबर १९८२ में, एक दिन जब मैं अपने घर लौटी तो मैंने देखा कि बाबा जी का मेरा प्रिय फ़ोटो ज़मीन पर गिरा हुआ है। मैंने ध्यान से देखा तो मुझे ख़ुशी हुई कि उसका केवल काँच ही टूटा था। सद्भाग्य से फ़ोटो बिलकुल ठीक था।

बाद में तार से सूचना मिली कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। मुझे महसूस हुआ कि बाबा जी ने प्रेम से यह दिखाया था कि उनका केवल बाहरी आवरण ही गया है और वे अब भी हमेशा की तरह पूर्ण रूप से मौजूद हैं।

कैन्र्स, ऑस्ट्रेलिया

२ अक्टूबर, १९८२ की सुबह-सुबह मैं गुरुदेव सिद्धपीठ की एक डॉर्मिटरी की सीढ़ियों से उतर रहा था, मुझे महसूस होने लगा कि वातावरण में एक अजीब-सी शान्ति है। मैं कार्यालयों की ओर गया तब आश्रम के एक प्रबन्धक बाहर आए और उन्होंने बताया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। जैसे ही यह सच्चाई समझ में आई, मेरा मन बिलकुल स्तब्ध हो गया। यह सोचकर कि शायद मैं रो पड़ूँगा, मैं हॉल में लगे पास के एक पर्दे के पीछे चला गया। जब मैं वहाँ जाकर खड़ा हुआ तो आश्चर्य, मुझे ज़रा भी उदासी महसूस नहीं हो रही थी। बल्कि, मेरे अन्दर आनन्द की लहरों पर लहरें उठने लगीं। मैं बाबा जी की उपस्थिति को इतनी तीव्रता से महसूस कर रहा था जितना कि पहले कभी नहीं किया था। मैं जान गया कि बाबा जी मेरे हृदय में हैं— और हमेशा रहेंगे, और उनकी कृपा मेरे पास कहीं भी पहुँच सकती है।

न्यू जर्सी, अमरीका

अक्टूबर, १९८२ में मैंने एक वर्ष के लिए कॉलेज से छुट्टी ली थी, क्योंकि मैं उदासी महसूस कर रहा था और अपनी आत्मा व जीवन के उद्देश्य से दूर महसूस कर रहा था। मैं दूसरे कुछ विद्यार्थियों के साथ एक ही घर में रहा करता था और मेरे एक मित्र का एक छोटा-सा ध्यान का कमरा था जिसमें बाबा जी का एक चित्र था। एक दिन मैं उसके इस छोटे-से कमरे में बैठा, एक दीपक जलाया और पहली बार ध्यान करने का प्रयत्न किया। जैसे ही मैंने बैठकर बाबा जी के चित्र को देखा, मुझे अपने अन्तर में ऐसी स्थिरता व प्रेम महसूस होने लगा, जैसा कि मैंने पहले कभी अनुभव नहीं किया था। बाबा जी की आँखों को देखते-देखते ऐसा लगा जैसे मेरे विचार तथा बेचैनी विलीन होती जा रही है।

कुछ दिनों बाद, मैं पहली बार अपने मित्र के साथ स्थानीय सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र गया। मुझे वहाँ का संगीत, नामसंकीर्तन तथा बाबा जी के प्रवचन का वीडिओ प्यारा लगा। लेकिन, लोग एक-दूसरे को सान्त्वना दे रहे थे क्योंकि बाबा जी ने कुछ ही दिन पहले महासमाधि ली थी; वास्तव में उन्होंने जिस दिन देहत्याग किया था, यह वही दिन था जब मैंने बाबा जी का चित्र अपने मित्र के कमरे में देखा था और पहली बार ध्यान किया था।

उसी दिन से मैंने सिद्धयोग पथ पर चलना शुरू किया था। बाबा जी, आपको बहुत-बहुत धन्यवाद, मेरा मार्गदर्शन करने के लिए और आपके प्रेम के लिए।

मैरीलैन्ड, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२, पूर्णिमा की रात को मेरी दादी, गुरुदेव सिद्धपीठ में थी। उन्होंने इन शब्दों में अपना अनुभव मुझे बताया :

मैं बहुत उदास थी। मैं बाबा जी से बात करना चाहती थी, किन्तु बाबा जी तो अब नहीं थे। उस रात मैं इसी गहरे दुःख के भाव के साथ सो गई। मध्य रात्रि के आस-पास, मुझे बाबा जी का कोमल

स्पर्श महसूस हुआ; वे मुझे जगाने के लिए प्रेम से मुझे हिला रहे हैं। बाबा जी ने पूछा, “तुम्हें मुझसे बात करनी थी। बोलो, तुम क्या कहना चाहती हो? मैं यहाँ हूँ।” मैंने उत्तर दिया, “अब आप आ गए हैं और मुझे दर्शन दे दिए हैं, इससे अधिक मुझे और क्या चाहिए? मेरे पास सब कुछ है।”

मैं बारम्बार गुरुमाई जी को और बाबा जी को प्रणाम अर्पित करती हूँ!

डोम्बीवली, भारत

वर्ष १९८१ की गर्मियों में श्री मुक्तानन्द आश्रम में वह हमारा अन्तिम दिन था और मैं हमारे सबसे बड़े बेटे को उसकी घुमाने वाली गाड़ी में लेकर हॉल के बाहर खड़ा था, उसी समय बाबा जी वहाँ से गुज़रे। बाबा जी उत्साह से भरपूर थे और उनकी सम्पूर्ण सत्ता से आनन्द का तेज प्रसरित हो रहा था। किन्तु मुझे अपने गहरे अन्तर में ऐसा लग रहा था कि शायद यह आख़िरी बार है जब मैं बाबा जी के भौतिक रूप में उनके दर्शन कर रहा हूँ। मुझे रोना आ गया।

३ अक्टूबर, १९८२ को मैं अपने बेटे को देख रहा था, वह ज़मीन पर बैठकर काग़ज़ पर कुछ चित्र बना रहा था। फ़ोन बजा। यह एक सिद्धयोगी का था जिसने सन्देश दिया कि बाबा जी ने एक दिन पहले अपनी देह त्याग दी है। मेरा हृदय बाबा जी की उपस्थिति से भर आया, और मैं जानता था कि वे यहाँ मेरे साथ ही हैं, मुझमें हैं और मेरे अपने प्रेम के रूप में हैं।

उसी क्षण से, मेरा इस बात पर पूर्ण विश्वास हो गया कि श्रीगुरु सदैव मेरे साथ हैं और मैं अपने हृदय में उनसे कभी भी मिल सकता हूँ। इस दृढ़ विश्वास ने मुझे, एक गृहस्थ होने की ज़िम्मेदारियों को निभाते हुए, सेवा हेतु समर्पित जीवन जीने के लिए व अपनी साधना में स्थिर बने रहने के लिए सम्बल दिया है।

धन्यवाद, गुरुमाई जी और धन्यवाद, बाबा जी, सच्चे अर्थों में एक परिपूर्ण जीवन जीने की कुंजी प्रदान करने के लिए।

टोरोन्टो, कॅनडा

मैं १९७९ में बाबा जी से मिली और उनकी तीसरी विश्वयात्रा के दौरान तथा बाद में १९८२ में गुरुदेव सिद्धपीठ में बाबा जी के महासमाधि लेने तक मैंने सेवा अर्पित की। इस दौरान मैं बाबा जी के प्रवचन सुनती थी जिनमें वे हर शाम के सत्संग में तथा शक्तिपात ध्यान-शिविरों में अन्तरात्मा के बारे में बड़ी सुन्दरता से समझाते थे। किन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता था कि बाबा जी जिस विषय में समझा रहे हैं उसकी मुझे अनुभूति हुई है। बाबा जी की महासमाधि की सुबह, गुरुमाई जी ने एक प्रवचन दिया जिसमें उन्होंने बताया कि बाबा जी ने अभी-अभी हमारे हृदय में प्रवेश किया है। उस क्षण में मैंने अनुभव किया कि मेरे हृदय में शक्ति की एक मधुर हलचल होने लगी है जिसे मैंने बाबा जी की उपस्थिति के रूप में पहचान लिया। मेरा वह अनुभव सदा मेरे साथ बना रहा है।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा के दिन, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ के गुरुचौक में था। मुझे अचानक ही बाबा जी के साथ होने की गहरी ललक महसूस होने लगी। ठीक उसी समय, एक सुन्दर लाल व नीले रंग का पतंगा आकर मेरे घुटने पर बैठ गया और मैंने अपने अन्तर में सुना, "यह शरीर क्षणभंगुर है; आत्मा अमर है।" मैंने महसूस किया कि आत्मा में लीन बाबा जी, हर कहीं हैं और वे हमेशा के लिए मेरे साथ हैं। इस समझ ने मेरी आन्तरिक दृढ़ता को बढ़ाया और इससे मेरे अन्तर-प्रेम में वृद्धि हुई।

रोडज़्, फ़्रांस

१ अक्टूबर, १९८२ की रात्रि को मेरे माता-पिता और मैं बाहर टहल रहे थे, तभी मेरी माँ ने ऊपर चमकीले चन्द्रमा को देखा और हर्ष से कह उठीं, “देखो, देखो! चन्द्रमा में बाबा जी का चेहरा है! वह बाबा जी का चेहरा है!” उनकी आनन्दमयी हँसी गूँजने लगी और हम सब भी हँसने लगे।

दूसरे दिन मैं सत्संग में भाग लेने के लिए मायॅमी के सिद्धयोग ध्यान-केन्द्र गई। वहाँ पहुँचने पर मैंने देखा कि कई लोग बाहर खड़े हैं। मुझे पता नहीं था कि क्या हो रहा है, किन्तु जब समाचार दिया गया कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है, मुझे महसूस हुआ कि मेरे हाथ आसमान की ओर उठ रहे हैं और मेरी आँखें भर आई हैं। मुझे महसूस हुआ कि मैं अपने अन्दर बाबा की आवाज़ को सुनकर खूब मुस्करा रही हूँ। वे कह रहे थे, “मैं अपना नाम ही बन गया हूँ! मैं अपना नाम ही बन गया हूँ! मैं अपना नाम ही बन गया हूँ : मुक्ति का आनन्द!”

न्यू मैक्सिको, अमरीका

१९८२ में मैं व मेरी सहेली, मेलबोर्न के आश्रम में ध्यान के एक कोर्स में भाग लेने वाले थे। मैं आन्तरिक शान्ति का अनुभव करना चाहती थी, इसी कारण से मैं ध्यान करना सीखना चाहती थी। फिर एक दिन अक्टूबर में, मेरी सहेली ने फ़ोन करके बताया कि कोर्स नहीं होगा क्योंकि स्वामी मुक्तानन्द ने महासमाधि ले ली है।

मैंने जो सोचा था, अपनी उस योजना के बिगड़ने से मैं काफ़ी चिन्तित व परेशान हुई। मैं अपने कमरे में इधर-उधर घूमते हुए खुद से बात करने लगी, “मुक्तानन्द बाबा, मैं सच में इस कोर्स में भाग लेना चाहती थी!” ऐसा मैंने कई बार कहा और आख़िरी बार तो ये शब्द बड़े ऊँचे स्वर में मेरे मुख से निकले, और ऐसा बोलते हुए मैं अपने पाँव भी पटक रही थी। उसी क्षण में, मुझे ज़ोर-से ताली बजाने की आवाज़ सुनाई दी और सुखासन की मुद्रा में बैठे एक योगी मेरी भृकुटी के बीच प्रकट हुए। इस तरह मुझे शक्तिपात दीक्षा प्राप्त हुई।

न्यूयॉर्क, अमरीका

२ अक्टूबर, १९८२ की पूर्णिमा की रात को मैं कश्मीर की वादियों में कैम्पिंग [शिविर] के लिए गई थी। उस रात मैंने पहली बार अत्यधिक विशाल व तेजस्वी चन्द्रमा देखा। इससे मैं आश्चर्यचकित रह गई थी। मुझे महसूस हुआ कि यह चन्द्रमा मेरी गहरी ललक को पूर्ण करने का वचन अपने में लिए हुए है। उस रात मुझे ब्रह्माण्ड के साथ एकत्व का भाव महसूस हुआ और मैं सो न सकी।

उस समय मैं बाबा मुक्तानन्द को नहीं जानती थी। पाँच वर्ष बाद जब मैं सिद्धयोग पथ की विद्यार्थी बनी, तब मैंने जाना कि २ अक्टूबर, १९८२ की रात्रि को बाबा जी ने महासमाधि ली थी।

कई बार मैं उस पूर्ण प्रशान्त रात्रि को याद करते हुए ध्यान करती हूँ—जो अब भूतकाल में बीता हुआ मात्र एक क्षण नहीं है, बल्कि वह समयातीत क्षण है जब बाबा जी मेरे साथ थे; वे उस समय मेरे साथ थे जब मैं जानती भी नहीं थी कि इस धरा पर उनका अस्तित्व है।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

१९८२ के पतझड़ में मैं श्री मुक्तानन्द आश्रम में सेवा अर्पित कर रहा था। एक दिन शाम के भोजन के बाद, मैंने सोचा कि मैं खुली हवा में बाहर जाऊँ। मैं अकेला था और घूमते हुए, आश्रम के पास वाली पहाड़ी की ओर जाने लगा। मैं वहाँ बैठ गया, मुझे एक अद्‌भुत प्रेमभरी शक्ति की तरंगे एक के बाद एक उठती हुईं, बारम्बार महसूस होने लगीं; मैं जान गया कि ये बाबा जी ही हैं। यह अनुभव बढ़ता ही गया और मैं एक ऐसी अवस्था में लीन हो गया जहाँ मुझे महसूस होने लगा कि बाबा जी मुझसे सचमुच बहुत प्रेम करते हैं। उस रात चन्द्रमा विशेषरूप से विशाल व परिपूर्ण था और अत्यन्त तेजस्वी था।

कुछ देर बाद, मैं वापस आश्रम की ओर चल पड़ा। अचानक मुझे महसूस होने लगा कि कुछ बात है जो अलग-सी महसूस हो रही है। तब मुझे पता चला कि बाबा जी ने महासमाधि ले ली है। यद्यपि समाचार अत्यन्त दुःखदायी था, फिर भी मेरा वह अनुभव मुझे निरन्तर शक्ति से भर रहा था। मैं

जानता था कि बाबा जी अब भी मेरे साथ हैं और मैंने कभी भी अपने अन्तर में उनकी उपस्थिति में कोई भी अवरोध महसूस नहीं किया। इस अनुभव ने मुझे पूर्णरूप से सहारा दिया।

कैलिफ़ोर्निया, अमरीका

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।